प्रौढ़ शिक्षा

जनवरी – जून 2020
वर्ष 64 अंक 1–2

सम्पादक मण्डल

प्रो. भवानीशंकर गर्ग
(संरक्षक)

श्री मृणाल पंत
श्री ए.एच.खान
डा. सरोज गर्ग
श्री दुर्लभ चेतिया
डा. डी.के.वर्मा
डा. उषा राय
डा. मदन सिंह
श्री एस.सी. खंडेलवाल
श्री राजेन्द्र जोशी

प्रधान संपादक
श्री कैलाश चौधरी

सम्पादक
डा. मदन सिंह

सहायक सम्पादक
बी. संजय

इस अंक में

सम्पादकीय

कौशल विकास और महिला सशक्तीकरण
– कल्पना कौशिक 4

महिला सशक्तीकरण के साधनों के रूप में शिक्षा
– भावना ठकराल 10

माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत् आंशिक रूप से श्रवण बाधित बालक एवं बालिकाओं कि सामाजिक विज्ञान विषय में शैक्षिक उपलब्धि पर सक्रिय अधिगम प्रविधि के प्रभाव का अध्ययन
–राजेश कुमार मौर्य
– उषा भटनागर 18

महात्मा गांधी की नई तालीम का समाजशास्त्र
– मनोज कुमार राय 22

भारतीय विचारक श्री अरविन्द घोष का शिक्षा में योगदान : एक अध्ययन
– विभा तिवारी 30

हमारे लेखक

मूल्यः रूपये 200/–वार्षिक

पत्रिका में व्यक्त लेखकों के विचार उनके वैयक्तिक विचार हैं, जिनके लिए संघ एवं सम्पादक की सहमति अनिवार्य नहीं है ।

आखिर कब तक अनौपचारिक क्षेत्र के मजदूर पहचान विहीन बने रहेंगे?

पूरी दुनिया के साथ–साथ भारत भी आज कोविड–19 महामारी से जूझ रहा है। ताजा आंकड़ों के अनुसार भारत में अब तक 19,10,681 लोग इस महामारी के चपेट में आ चुके हैं। यह ठीक है कि संक्रमित लोगों में से अब तक 12,82,917 ठीक भी हो चुके हैं पर 39,856 लोगों को अपनी जान भी गंवानी पड़ी है। केन्द्र सरकार सहित सभी राज्य सरकारें इस बीमारी से लोहा लेने को तत्पर हैं और हर संभव प्रयास करते भी दिख रहे हैं। जनमानस में भी पर्याप्त सचेतंता आई है जो लोगों के नित्य प्रति व्यवहार में प्रतिफलित हो रही है। इन सबके बावजूद इस महामारी पर विराम चिन्ह कब तक लग पायेगा और कब तक लोग सामान्य जीवन को जीने की स्थिति में आ पायेंगे इस पर आज कुछ भी नहीं कहा जा सकता।

पर, इतना तो निश्चित है कि इस महामारी ने हमारे नित्यप्रति व्यवहारों के कई आयामों को पूर्णतया बदल कर रख दिया है। कार्यालय से वापस घर जाने पर दिनभर मम्मी या पापा के आने का इंतजार कर रहे बच्चे अब पहले की भांति उछलकर गोद में नहीं आते। केक, चॉकलेट अथवा फल ही क्यों न हो उसे तुरंत उपयोग में लाने की कोशिश भी कोई नहीं करता। संभव है कि स्वास्थ्य एवं स्वच्छता को लेकर उत्पन्न जागरूकता सदा के लिए आने वाले दिनों में हमारे जीवन का अभिन्न अंग बन जाय। लेकिन इस अप्रत्याशित चुनौती ने हमारे राष्ट्रीय जीवन के ऐसे कई मुद्दों को सभी के समक्ष इस प्रकार ला खड़ा किया है कि शायद ही इसे कभी भुलाया जा सके। भूखे प्यासे बच्चों और पत्नी को साथ लिये दो–दो हजार किलोमीटर से भी अधिक तक की दूरी पैदल तय कर अपने नीड़ (गांव) को वापस लौटते प्रवासी मजदूरों के हृदय विदारक दृश्य से सभ्य समाज अपनी आंखें किस प्रकार चुरा पायेगा?

विकसित एवं आत्मनिर्भर भारत हेतु किए जा रहे प्रयासों का डंका बजाते व्यवस्था को शायद नींव के पत्थरों की पीड़ा का भान ही नहीं रहा। इसलिए ही तो अनौपचारिक क्षेत्र के उन करोड़ों मजदूरों जिनकी मेहनत पर विकास की

अट्टालिकाएं खड़ी हैं उनकी उपस्थिति को भी नजरअंदाज किया जाता रहा। राशन एवं आधार कार्ड जैसे प्रमाण पत्रों के अभाव में त्रासदी के शुरूआती महीनों में इन करोड़ों परिवारों को राशन तक भी उपलब्ध न हो सका। केन्द्र सरकार द्वारा जब आत्मनिर्भर भारत हेतु 20 लाख करोड़ रूपये के पैकेज की घोषणा की गयी उसी दौरान केंद्रीय वित्तमंत्री ने अनौपचारिक क्षेत्र के उन आठ करोड़ मजदूरों जिनके पास राशन कार्ड भी नहीं है, उन्हें राशन देने की बात कही। पर क्या यह संख्या केवल आठ करोड़ ही है? क्या इन आठ करोड़ मजदूरों का कोई परिवार नहीं है? केंद्रीय श्रम एवं रोजगार मंत्रालय तथा राज्यों में भी तदनरूप विभाग होने के बावजूद आखिर कब तक अनौपचारिक क्षेत्र के मजदूर पहचान विहीन बने रहेंगे? आजाद भारत में कब तक इन मजदूरों की सुरक्षा का सवाल अनुत्तरित रहेगा? और आत्मनिर्भर भारत के पैकेज से 0.175 प्रतिशत खर्च कर इन्हें केवल राशन मुहैया कराने पर हम आत्ममुग्ध होते रहेंगे? ये सभी सवाल उत्तर के लिए व्यवस्था एवं सभ्य समाज के हर एक घटक के सामने मुह बाए खड़े हैं।

विदित है कि सन् 2008 में पारित 'अन–ऑर्गनाइज्ड वर्कर्स सोशल सिक्योरिटी एक्ट 2008' के प्रावधानों के अनुसार देश के उन सभी कामगारों का जो अनौपचारिक क्षेत्र में कार्यरत हैं, का पंजीकरण कर उन्हें 'अनौपचारिक कामगार पहचान संख्या' के साथ पहचान पत्र (स्मार्ट कार्ड) उपलब्ध कराया जाना था ताकि उनकी सुरक्षा की समय्क व्यवस्था की जा सके। पर इस दिशा में अब तक क्या प्रगति हुई है इसकी कोई व्यवस्थित जानकारी उपलब्ध नहीं है। बहरहाल आज देश दोहरे चुनौती के मोड़ पर खड़ा है। सीमा पर चीन ललकार रहा है और यह हम सभी जानते हैं कि ऐसे चुनौतियों का उत्तर मात्र सीमा पर दिया जाना पर्याप्त नहीं है। इसके लिए तो वास्तव में हमें सर्वागींण रूप से आत्मनिर्भर बनना होगा जिसकी चाबी अंततः हमारे कामगारों की कुशलता एवं सुरक्षा पर ही निर्भर होगी। अतः आवश्यक है कि जमीनी स्तर पर कार्य कर रहे कामगारों की उन्नति और सशक्तीकरण हेतु उपलब्ध नीति नियामक प्रावधानों को दस्तावेजों से निकालकर यथाशीघ्र अमलीजामा पहनाया जाए। मौजूदा हालात से उबरने का यह एक स्थायी उपक्रम होगा।

– बी. संजय

कौशल विकास और महिला सशक्तीकरण

– कल्पना कौशिक

स्वावलंबन और सशक्तीकरण एक दूसरे के पर्याय होते हैं। महिला हो या पुरूष, जब तक वह दूसरों पर आश्रित रहेगा और आर्थिक रूप से स्वावलंबी नहीं होगा तब तक वह सशक्त नहीं हो सकता। पूर्व और उत्तर पाषाण काल की बात छोड़ दें तो भारतीय समाज शुरू से ही पुरूष प्रधान रहा है। ऐसा प्रतीत होता है कि यहां महिलाओं के सोच–विचार का कोई महत्व नहीं था। उनका लालन–पालन ही इस तरह किया जाता था कि वे अपने जीवन के विभिन्न चरणों में पिता, पति और पुत्र पर आश्रित रहकर जीवन व्यतीत करें। आदिवासी समाज में उनकी स्थिति अपेक्षाकृत बेहतर थी और आज भी है। यहां महिलाएं पूरी तरह उत्पादन से जुड़ी होती हैं और अपने श्रम के एवज में अर्थोपार्जन करती हैं। वे किसी पर आश्रित नहीं होतीं बल्कि परिवार के आय में योगदान देती हैं। इसलिए समाज में उनकी अपनी एक हैसियत होती है। लेकिन पारंपरिक भारतीय समाज में महिलाओं के शोषण और उत्पीड़न का प्रमुख कारण उनका पति की कमाई पर निर्भर होना रहा है। घर की आंतरिक व्यवस्था के प्रबंधन में वे पुरूषों से कही ज्यादा परिश्रम करती हैं। उनके काम के घंटे भी निर्धारित नहीं हैं। साप्ताहिक अथवा अन्य किसी तरह का उन्हें अवकाश नहीं मिलता। लेकिन इसके बावजूद उनकी हैसियत दोयम दर्जे की रहती है। वे अपनी सेवाओं के एवज में कोई पारिश्रमिक नहीं लेती, फिर भी उनका कोई मोल नहीं होता। वे अबला बनी रहती हैं। लेकिन जो महिलाएं पढ़ी लिखी हैं और नौकरी अथवा व्यवसाय के जरिए अर्थोपार्जन कर रही हैं, उनकी स्थिति घर अथवा ससुराल दोनों ही जगह ज्यादा मजबूत होती है। उन्हें सम्मान मिलता है। स्वावलंबी होने के कारण वे किसी से दबती नहीं। अपना सर ऊंचा कर चलती हैं। अब उन्हें सशक्त बनाने के लिए सरकारी–गैर सरकारी स्तर पर कई प्रयास किए जा रहे हैं। जैसे–जैसे वह स्वावलंबी और सशक्त हो रही हैं, रूढ़िवादी परम्पराओं के दकियानूसी जंजीरों से स्वयं को मुक्त करती जा रही हैं।

जहां तक कौशल का सवाल है, पढ़ी लिखी महिलाएं तो जीवन के हर क्षेत्र में अपनी काबिलियत का लोहा मनवा ही रही हैं, कम पढ़ी–लिखी घरेलू महिलाओं में भी किसी न किसी रूप में कुछ खास कौशल मौजूद रहता है। सिलाई–कढ़ाई,

बुनाई जैसी कई चीजों का प्रशिक्षण उन्हें घर में ही अपने बड़ों से मिल जाता है। यह अलग बात है कि न तो उनका व्यावसायिक दृष्टिकोण होता है और न महत्व। व्यावसायिक दृष्टिकोण से देखें तो स्वाभाविक रूप से प्राप्त उनके कौशल में और निखार लाने की जरूरत होती है। वैसे अभी भी अशिक्षित अथवा अल्पशिक्षित महिलाओं का एक हिस्सा गैर सरकारी संगठनों आदि के जरिए प्रशिक्षण प्राप्त कर कुटीर स्तर पर उत्पादन से जुड़ा है। हस्तशिल्प और लोककलाओं के विकास में वे अहम योगदान दे रही है। उनके उत्पाद का एक बाजार भी बन चुका है। उनके अंदर एक स्तर तक उद्यमिता का भी विकास हो चुका है। बस इसके दायरे का विस्तार कर दिया जाए तो महिला सशक्तीकरण की दिशा में एक बड़ा काम हो सकता है।

सरकार इस बात को समझती है इसीलिए सरकारी स्तर पर महिला सशक्तीकरण का नीतिगत निर्णय लिए जाने के बाद उनके अंदर कौशल और उद्यमिता के विकास की जरूरत महसूस की जा रही है। इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए राज्य और केंद्र के स्तर पर कई योजनाएं भी बनाई गईं हैं जिनका सफलतापूर्वक संचालन किया जा रहा है। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने व्यापक राष्ट्रीय नीति के तहत कौशल विकास और उद्यमिता पर भारी जोर दिया है। इसे कई नई योजनाओं के साथ मूर्त रूप प्रदान करने का अभियान चलाया जा रहा है। इस महत्वाकांक्षी योजना के तहत वर्ष 2022 तक 40 करोड़ से अधिक भारतीयों को प्रशिक्षित करने का लक्ष्य निर्धारित किया गया है यानि सरकार इसके जरिए प्रति सप्ताह औसतन लगभग दस लाख लोगों को प्रशिक्षित करने का इरादा रखती है।

लेकिन सरकार का ध्यान खासतौर पर पढ़ी लिखी युवा महिलाओं और युवकों की ओर केंद्रित है। आंकड़े बताते हैं कि सन् 2014 में केवल 70 लाख भारतीयों को प्रशिक्षित किया जा सका था। राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण 2012 का आंकलन है कि 5 फीसदी से भी कम भारतीयों ने औपचारिक कौशल प्रशिक्षण प्राप्त किया है। सरकार इसके दायरे का विस्तार करना चाहती है। लिहाजा इस योजना को सफलतापूर्वक अमली जामा पहनाने के लिए उपयुक्त लक्ष्य को पहचान ने एवं उस पर ध्यान केंद्रित करने की आवश्यकता है तभी वास्तविक जरूरतमंदो तक इसका लाभ पंहुचाया जा सकेगा। उनको कौशल प्रशिक्षण दिया जा सकेगा। सच पूछा जाए तो महिलाओं की श्रम शक्ति में भागीदारी दर पुरूषों की तुलना में काफी कम है। आंकड़े बताते हैं कि 83 फीसदी पुरूषों की तुलना में केवल 23 फीसदी 18 से

35 वर्ष की महिलाएं ही श्रम शक्ति में सक्रिय रूप से भागीदारी कर रही हैं। उसमें अल्प शिक्षित महिलाएं कम सक्रिय हैं। इस वर्ग की केवल 15 फीसदी महिलाएं श्रम शक्ति के रुप में ज्यादा सक्रिय हैं। माध्यमिक शिक्षा प्राप्त महिलाएं भी अपेक्षाकृत तौर पर सक्रिय रुप से भागीदारी कर रही हैं। उनकी तुलना में अशिक्षित और प्राथमिक स्तर पर शिक्षा प्राप्त महिलाओं की भागीदारी दर लगभग दोगुनी है। आंकड़े बताते हैं कि, इन महिलाओं का एक बड़ा हिस्सा काम करना चाहता है लेकिन उसे सही दिशा और अवसर नहीं मिल पाता। कौशल विकास के जरिए इन महिलाओं को नौकरियां मिलने या स्वरोजगार की ओर बढ़ने का बेहतर अवसर मिल सकता है। 70 फीसदी महिलाएं जो श्रम शक्ति का हिस्सा नहीं हैं, वे मुख्य रूप से घरेलू कामों में सक्रिय हैं। इनमें से 30 फीसदी महिलाएं अवसर मिलने पर काम करना चाहती हैं। महत्वपूर्ण बात यह है कि, इनमें से आधी से अधिक महिलाएं मानती हैं कि उनके पास इच्छाशक्ति तो है लेकिन श्रम शक्ति का हिस्सा बनने के लिए आवश्यक कौशल नहीं है। ऐसी महिलाओं को कौशल विकास योजना का हिस्सा बनाया जाए तो उनके पास अधिक आर्थिक स्वावलंबन और स्वतंत्रता ही नहीं होगी बल्कि एक बड़े श्रम बल का उदय और घरेलू उत्पादन की संभावनाओं के दायरे का भी विस्तार होगा। स्किल इंडिया के तहत भर्ती रणनीतियों पर फिर से ध्यानकेंद्रित करने से बेहतर परिणाम मिल सकते हैं।

एन.एस.एस. के आंकड़े और प्रशिक्षण एजेंसियों के परिणामों से स्पष्ट होता है कि कौशल प्रशिक्षण कार्यक्रम 12वीं तक शिक्षा प्राप्त युवाओं पर अधिक केंद्रित है और महिलाओं की तुलना में पुरूषों की प्रशिक्षण में भागीदारी दर काफी अधिक है। अब तक के उपलब्ध साक्ष्यों से पता चलता है कि कम शिक्षित युवाओं एवं महिलाओं में प्रशिक्षण की मांग सबसे अधिक है। खासतौर पर ग्रामीण क्षेत्रों की महिलाओं की इस योजना में भागीदारी बढ़ाने की नीति अपनाई जाए तो आबादी के अन्य हिस्सों की तुलना में वे कौशल से कही ज्यादा लाभ उठा सकती हैं। सरकार इस कार्यक्रम में इन वर्गों को ज्यादा से ज्यादा जोड़ने की ओर ध्यान केद्रित करे तो अपने कौशल विकास लक्ष्यों को प्राप्त करने में काफी सहायता मिल सकेगी। भारतीय समाज पर इसका प्रभाव भी जल्द दी दिखने लगेगा। हालांकि पुरूषों का एक हिस्सा ऐसा भी है जो महिला सशक्तीकरण को अपने वर्चस्व के लिए चुनौती मानता है और उन्हें उनकी औकात में रखने का प्रयास करता है। इसी मानसिकता के लोग बलात्कारी भी हो जाते हैं। उनका उद्देश्य उनकी शारीरिक

कमजोरी का एहसास दिलाना और अपमानित करना होता है। लिहाजा कौशल और उद्यमिता विकास के साथ उन्हें जूडो–कराटे आदि का प्रशिक्षण देने पर भी विचार किया जाना चाहिए ताकि शारिरिक कमजोरी उनके सशक्तीकरण की राह का रोड़ा नहीं बने और वे आर्थिक रूप से ही नहीं अपनी सुरक्षा के मामले में भी आत्मनिर्भर बन सकें। इसके अलावा कौशल विकास कार्यक्रमों, उनकी वर्तमान भर्ती रणनीतियों पर एक बार पुनर्विचार किया जाना चाहिए और इस उच्च संभावित आबादी को लामबंद करने के लिए बेहतर प्रक्रियाओं को लागू किया जाना चाहिए। यदि सरकार अपनी महत्वाकांक्षी लक्ष्य की ओर वास्तविक प्रगति करना चाहती है तो प्रशिक्षु आबादी लक्ष्य का विस्तार करना सबसे पहला कदम होना चाहिए। अभी यह स्पष्ट नहीं है कि वर्तमान भर्ती रणनीतियां इन लक्ष्यों तक पहुंचने के लिए पर्याप्त हैं या नहीं। इसकी समीक्षा की जानी चाहिए। जरूरत हो तो इनमें बदलाव लाना चाहिए। इस बात की पड़ताल की जानी चाहिए कि कौन से लोग प्रशिक्षण में सबसे अधिक रूचि रखते हैं, उन्हें कितना जोड़ा जा सका है और किन्हें इस कार्यक्रम का सबसे ज्यादा और सार्थक फायदा पहुंच रहा हैं, तथा किन्हें लाभ पहुंचाया जाना चाहिए।

कौशल प्रशिक्षण से फायदा हालांकि हर किसी को मिलेगा, लेकिन विशेष रूप से महिलाएं एवं कम शिक्षा प्राप्त युवाओं को। अन्य देशों में हुए अध्ययन से विशेष कर महिलाओं के लिए रोजगार के परिणामों पर, कौशल के सकारात्मक प्रभावों का पता चलता है। हालांकि भारत में करणीय साक्ष्य की कमी है, बावजूद इसके यह पता चलता है कि व्यावसायिक प्रशिक्षण उच्च श्रम शक्ति की भागीदारी के साथ जुड़ा है। बिना इस पर ध्यान दिए कि व्यक्ति की शिक्षा स्तर क्या है, कौशल विकास से श्रम शक्ति की भागीदारी को बढ़ाने पर विचार किया जाना चाहिए। इसका फोकस सिर्फ महानगरों और शहरी इलाकों तक नहीं बल्कि दूरस्थ ग्रामीण इलाकों तक होना चाहिए। वे लोग जिन्होंने व्यावसायिक प्रशिक्षण पूरा कर लिया है, अकुशल व्यवसायों की तुलना में अर्द्ध कुशल व्यवसायों में उनके भाग लेने की संभावना अधिक रहती है – और यह संबंध कम शिक्षा के स्तर वाले लोगों के लिए और मजबूत प्रतीत होती है। पुरूषों की तुलना में कौशल प्रशिक्षण प्राप्त महिलाओं की श्रम शक्ति 30 फीसदी अधिक है। पुरूषों के लिए इन आंकड़ों का अंतर 16 फीसदी है। लिंग एवं शिक्षा अनुसार श्रम बल में भागीदारी की स्थिति विचारणीय है। हालांकि यह सब कौशल से होने वाले परिवर्तन के कारणों के साक्ष्य नहीं हैं,

यह कौशल प्रशिक्षण और श्रम शक्ति की भागीदारी में वृद्धि के बीच महत्वपूर्ण सह–संबंध स्थापित करता है। यह सवाल भी अहम है कि कौशल का लक्ष्य कौन होने चाहिए? संक्षेप में कहें तो इसका एकमात्र जवाब है मध्यम शिक्षित युवा और महिलाएं। हालांकि 18 वर्ष से 35 वर्ष के बीच की श्रम भागीदारी दर हर जगह कम ही पाई गई है, 11वीं या 12वीं पास शिक्षा के साथ युवाओं के श्रम बल में होने की संभावना कम ही होती है। 42 फीसदी युवाओं (18 से 35 वर्ष उम्र) के पास 9वीं या 10वीं तक शिक्षा प्राप्त है, जबकि केवल 27 फीसदी युवाओं के पास 11वीं या 12वीं तक शिक्षा है। कौशल प्रशिक्षण कार्यक्रमों को अपना लक्ष्य, उस आबादी पर अधिक रखना चाहिए जिन्होंने उच्च माध्यमिक विद्यालय से आगे बढ़ स्नातक नहीं किया है। ऐसा किए जाने पर ही सुखद परिणाम प्राप्त होंगे।

इसमें संदेह नहीं कि सरकार के प्रयासों, प्रशासन, गैर सरकारी संस्थाओं एवं जनसहयोग से देश बेटा और बेटी के बीच भेदभाव की प्रवृति को खत्म करने की दिशा में मजबूती से आगे बढ़ा है। स्त्री को कमजोर आंकने की सोच में परिवर्तन नितांत आवश्यक है और महिलाएं स्वयं अपने कार्यों से ही इस सोच को बदलने का काम कर सकती हैं। महिलाओं ने शासन–प्रशासन के अनेक उच्च पदों को सुशोभित किया है और जीवन के हर क्षेत्र में सफलता का परचम लहरा रही हैं।

हाल के वर्षों में देखा गया है कि शिक्षा के क्षेत्र में बेटियां लगातार शानदार प्रदर्शन कर रही हैं और विभिन्न बोर्ड परीक्षओं के परिणामों में उनका दबदबा कायम होना इस बात की बानगी है।

दरअसल महिला सशक्तीकरण के लिए पितृसत्तात्मक सामजिक ढ़ांचे की सोच में बदलाव लाने की जरूरत है। वर्तमान सोच के कारण ही लिंगभेद का माहौल है। भारी–भरकम दहेज प्रथा के कारण बेटियों को बोझ और बेटों को ईश्वर का वरदान मानने की मानसिकता बनी हुई है। किसी न किसी रूप में यह अभी भी मौजूद है। इसी कारण कुछेक राज्यों में भ्रूण हत्या जैसे अमानुषिक कृत्य होते हैं। इससे सिर्फ एक संभावना की ही मौत नहीं होती बल्कि लिंगानुपात में भी गड़बड़ी आती है। जिन राज्यों में भ्रूण हत्या के मामले ज्यादा हैं पुरूषों की तुलना में महिलाओं की संख्या चिंताजनक स्तर तक कम है। इस पर रोक के लिए कानून भी बनाए गए हैं लेकिन मानसिकता और सामजिक मान्यताएं कानून की धाराओं से निर्धारित अथवा संचालित नहीं होतीं। यह तभी संभव है जब बेटियां समाज में उत्पादन का हिस्सा बनेंगी। तभी उन्हें पराया धन अथवा बोझ समझने की मानसिकता खत्म

होगी। यह कौशल और उद्यमिता के विकास के जरिए ही संभव है। सरकार को इस पर ध्यान देना चाहिए। दरअसल कृषि युग के संयुक्त परिवार प्रणाली के खत्म होने के बाद औद्योगिक युग में एकल परिवार प्रणाली का जो ढ़ांचा तैयार हुआ उसके अपने मूल्य और सोच का विकास नहीं हो पाया। पारंपरिक समाज की दकियानूसी जकड़न कहीं न कहीं मौजूद रही। अब उससे छुटकारा पाने और नये युग के नये मूल्यों को स्थापित करने का समय है। यह एक ऐतिहासिक जरूरत है।

Proudh Shiksha

Form IV

1.	Place of Publication	Indian Adult Education Association 17-B, Indraprastha Estate New Delhi – 110 002
2.	Periodicity of Publication	Half Yearly
3.	Printer's name Nationality Address	Dr. Madan Singh Indian 17-B, Indraprastha Estate New Delhi – 110 002
4.	Publisher's name Nationality Address	Dr. Madan Singh Indian 17-B, Indraprastha Estate New Delhi – 110 002
5.	Editor's name Nationality Address	Dr. Madan Singh Indian 17-B, Indraprastha Estate New Delhi – 110 002
6.	Name and address of individuals who own the newspaper and partners or shareholders, holding more than one percent of the total capital	Indian Adult Education Association 17-B, Indraprastha Estate New Delhi – 110 002

I, Dr. Madan Singh, hereby declare that the particulars given above are true to the best of my knowledge and belief.

Sd/-

Dated: 28-2-2020

Dr. Madan Singh

Publisher

महिला सशक्तीकरण के साधनों के रूप में शिक्षा

भावना ठकराल

''लोगों को जागरूक करने के लिए महिलाओं को जागृत करना होगा। जब महिलाएं आगे बढ़ती हैं तो परिवार आगे बढ़ता है, गांव आगे बढ़ता है और राष्ट्र आगे बढ़ता है।''

– पंडित जवाहर लाल नेहरू

नारी को शिक्षित करना और उसका आत्मसम्मान बचाये रखना ही उसका सच्चा सम्मान है। शिक्षा के पंखों से उड़कर ही वह उन्नति के नये आयाम प्रस्तुत कर सकती है। नारी की उन्नति में ही मनुष्य के र्स्वागींण उन्नति का राज निहित है। अर्थात जहाँ नारी का सम्मान है, वही खुशी है, उत्साह है, शान्ति है, संतुष्टि है, परिवार खुशहाल है। आज के संसार में महिला सशक्तीकरण को अत्यंत संकीर्ण अर्थ में समझा जाता है। एक व्यक्ति को तभी शक्तिशाली कहा जा सकता है, जब व्यक्तिगत सम्पदा, शिक्षा, सूचना, ज्ञान, सामाजिक प्रतिष्ठा, पद, नेतृत्व जुटाने की क्षमता जैसे सत्ता संसाधनों के बड़े भाग पर उसका नियंत्रण हो। राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) में महिलाओं को सशक्त बनाने के लिए कुछ निश्चित रणनीतियों का सुझाव दिया गया था। इसके अनुसार महिलाओं द्वारा सामूहिक विचार, चिंतन और निर्णय लेने का सुझाव दिया गया था। कई अध्ययनों से ज्ञात होता हैं कि सामूहिक विचार, चिंतन और निर्णय लेने की दिशा में आगे बढ़ने के कारण महिलाएं सशक्त हुई हैं। महिला सशक्तीकरण वास्तव में समाज के सम्पूर्ण विकास का ही पर्याय हैं। स्वास्थ्य, स्वच्छता और ज्ञान से पूर्ण शिक्षित महिला अपने परिवार के लिए श्रेष्ठतर, रोगमुक्त वातावरण निर्मित करने में सक्षम होती है। एक स्वनियोजित महिला न केवल अपने परिवार के वित्तिय संसाधनों में योगदान देने में सक्षम होती है, अपितु देश के समग्र सकल घरेलू उत्पाद (जी.डी.पी.) की वृद्धि में भी योगदान देती है। एक व्यक्ति की आय के स्थान पर आय का सांझा स्त्रोत किसी भी परिवार के जीवन की गुणवत्ता को कहीं अधिक ऊंचा उठा सकता है। आर्थिक विकास की तेज गति ने लगभग सभी क्षेत्रों में शिक्षित महिला श्रम बल की मांग में वृद्धि की है। आज महिलाएं भी अपने पति के बराबर, कमा रही है। उसके इस योगदान को नकार कर नहीं बल्कि स्वीकार कर आगे बढ़ा जा सकता हैं। देश की लगभग 50 प्रतिशत महिला आबादी के स्वास्थ्य शिक्षा और सशक्तीकरण के बिना विकास की यात्रा पूरी नहीं की जा सकती। महिला विकास के प्रति एक बहु दिशात्मक व्यवस्थित दृष्टिकोण निश्चित रूप से देश को इस मार्ग पर काफी आगे ले जाएगा। सशक्तीकरण एक

बहुआयामी, बहुपक्षीय और बहुस्तरीय अवधारणा है। बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ और सुकन्या समृद्वि योजना जैसे कार्यक्रम बालिकाओं की शिक्षा और वित्तीय सुरक्षा निश्चित कर कन्या भ्रूणहत्या को रोकने में मददगार है। केवल एक स्वस्थ महिला ही सशक्त महिला हो सकती है। इसलिए महिलाओं की स्वास्थ्य और पोषण सम्बंधी आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर आयुष्मान भारत कार्यक्रम, राष्ट्रीय पोषण मिशन, उज्जवला जैसी योजनाएं लागू की गई हैं। शक्ति को, दूसरों के व्यवहार को, समय के साथ या उसके बिना प्रभावित करने की क्षमता के रूप में परिभाषित किया जाता है। एक व्यक्ति या समूह में यह शक्ति किस सीमा तक होती है, यह उनके द्वारा डाले जा सकने वाले सामाजिक प्रभाव से जुड़ा होता है। जाने–माने फ्रांसीसी फैशन डिजाइनर कोको चानेल ने कहा था – ''एक लड़की के पास ये दो चीजें होनी चाहिये – कौन और क्या जो वह होना चाहती है। नारी में न केवल जन्म देने अपितु पालन–पोषण की भी अद्वितीय क्षमता होती है और यही क्षमता आज मानव को टिकाए रख सकी है। आज चारों तरफ जिस अन्धेरे का विस्तार बढ़ रहा है, उसमें भविष्य की आशाओं की किरण महिला ही है। संकट से घिरी मानवता का कल्याण यदि होना है तो वह महिलाओं के सक्रिय योगदान से ही संभव है, इसमें कोई अतिश्योक्ति नहीं, कोई दो राय नहीं है। मौजूदा विश्व की सबसे बड़ी एवं जवलंत समस्या पर्यावरण के बिगड़ते माहौल की है और इस पर्यावरण को संतुलित रूप प्रदान करने की कोशिश बिना महिलाओं की भागीदारी के असंभव है।

राष्ट्र निर्माण में महिलाओं की भूमिका

यह कहना निर्विवाद सत्य है कि राष्ट्र के निर्माण एवं विकास में महिलाएं प्रमुख तथा महती भूमिका निभाती हैं। वैदिक काल में तो इनके सम्मान को सर्वोपरि माना जाता था। इन्हें विदुशी की संज्ञा दी गई थी। स्त्रियाँ शास्त्रार्थ के लिए भी पुरूषों को चुनौतियां देती थीं। गार्गी नामक एक विदुशी ने यह घोषणा की थी कि वह उसी व्यक्ति से शादी करेगी जो उसे शास्त्रार्थ में पराजित करेगा। गार्गी को कोई परास्त नहीं कर सका । अतः वह ताउम्र अविवाहित रही। तात्पर्य यह है कि नारी किसी से कम नहीं आंकी जा सकती है। वह अबला नहीं अपितु सबला है। अंग्रेजी में एक कहावत है "A good mother is better than hundred teachers" अर्थात एक मां सौ शिक्षकों से बेहतर है। मां तो एक चलता–फिरता शिक्षालय है। इस तथ्य को नजर अंदाज कर जब भी प्रकृति की इस रचना को अपमानित किया गया है, तब–तब विनाश ने बड़े–बड़े सम्राटों एवं उनके राज्यों को जड़मूल से नष्ट करने का पारम्परिक खेल खेला है। समूचे विश्व इतिहास में ऐसी किसी भी एक महिला का नाम नहीं जिसने देशद्रोह अथवा राज्यद्रोह किया हो, जबकि पुरूषों के कई नाम इतिहास में आ चुके हैं। जी कर भी और मरकर भी मनुष्य,

समाज, राष्ट्र और विश्व के मंगलमय भविष्य के लिए कुछ अगर सकती हैं तो वे महिलाएं ही हो सकती हैं। पुरूषों द्वारा किये जा रहे निरन्तर शोषण तथा उत्पीड़न के बावजूद अवसर पाते ही नारी ने अपनी श्रेष्ठता के अनूठे जौहर दिखाये हैं। वर्तमान में भी नारी प्रकारान्तर से शोषण की जंजीरों में आबंध है परंतु फिर भी उसकी रचनात्मक शक्ति ने पुरूषों के शोषण के अभेद्दय किलों को कई बार धराशायी किया है और राष्ट्र के नवनिर्माण की दिशा में अनुकरणीय योगदान दिया है। देश की नौ करोड़ मुस्लिम महिलाओं को शिक्षा से सशक्तीकरण के फलस्वरूप सैंकड़ो वर्षों पुराने शरिअत कानून से आजादी मिली। शिक्षा के बल पर ही मुस्लिमों की आधी आबादी को तीन तलाक विधेयक से भी आजादी मिल सकी है। इससे पूर्व आजीवन निबाहे जाने वाले वैवाहिक सम्बंध को बोल या लिखकर तोड़े जाने का सिलसिला अनवरत् बना हुआ था। फेसबुक, वाट्सअप और ईमेल के जरिए भी संबंध तोड़े जा रहे थे। ये सम्बंध न टूटे, इसके लिए आवश्यक पहल करने की जरूरत तो मुस्लिम बोर्ड, धर्म गुरूओं, संसद में बैठे मुस्लिम सांसदों और मुस्लिम बुद्विजीवियों की थी लेकिन अगुवा बनी ये मुस्लिम महिलाएं जो कुरान, शरिअत और संविधान की कमोबेश जानकार नहीं थी। अलबत्ता इतना जरूर अनुभव कर रही थी कि 'तलाक–ए–विद्दत' का प्रावधान उनके मानवाधिकारों के हनन का सबसे बड़ा जरिया बना हुआ है। इसे संवैधानिक चुनौती देने का उन्होंने बीड़ा उठाया और जब तक इस मिशन में सफलता नहीं मिली तब तक वे चैन से नहीं बैठी। उनके साथ इस लैंगिक अन्याय को दूर करने में भारतीय मुस्लिम महिला आंदोलन की 'जकिया–सोमन' अगुवा बनी। आखिर में सर्वोच्य न्यायालय और भारत सरकार भी उनकी मंशा और भावना का अनुगामी बनते दिखे। संसद में उन दिनों विदेश राज्य मंत्री एम.जे. अकबर ने अपने तेज–तर्रार संवादों से तर्क देकर सबकी बोलती बंद कर दी थी। कुरान की आयतों का हवाला देते हुए अकबर ने कहा कि 'यह पवित्र ग्रंथ कहता है कि मुस्लिम महिलाओं का जो हक है, उन्हें हर हाल में उससे ज्यादा मिलना चाहिये। यह विधेयक जो तीन तलाक के विरूद्ध है उन नौं करोड़ मुस्लिम महिलाओं के लिए जीवनदायी संजीवनी है, जो यकायक एकदम फौरन तलाक के खौफ में जी रही हैं। दरअसल, इस कानून से उन लोगों को तगड़ा झटका लगा है, जो इस तलाक के बहाने महिलाओं को हमेशा दिन रात दहशत और आतंक के साये में जीते रहने को विवश करते रहते थे। भले ही पुरूष प्रधान भारतीय समाज नारी की स्वतंत्रता की वकालत करता हो मगर समाज में व्याप्त अंतर्विरोध इस तथ्य को नकारते हैं। भारत में महिलाओं ने अपनी तरक्की की राह के लिए बड़ा संघर्ष किया है। संघर्ष के बूते ही नयी राह खुलती जा रही है। यह सुखद परिवर्तन है। हाल ही में रिलीज हुई 'थप्पड़' फिल्म में दर्शाया गया है कि हीरो को एक पार्टी में लड़ने से रोकने पर जब उसका भाई और साथी मना करता है तो वह उन्हें कुछ नहीं कहता। पर जब उसकी

पत्नी समझाने आती है तो उसे थप्पड़ जड़ देता है। मनुष्य का स्वभाव है वह जिसे सम्मान देता है अथवा जिसे ताकतवर मानता है, उससे गुस्सा आने पर भी मीठी–मीठी बातें करता है पर जिसे कमजोर समझता है, उसकी छोटी सी बाते भी बर्दाश्त नहीं कर पाता। पत्नी के साथ पति के बुरे बर्ताव के पीछे का एक कारण यह भी है। एक पुरूष के मन में यह हमेशा बैठा रहता है कि पत्नी उससे कमजोर है।

अनुश्री की यह कविता यहाँ दर्शनीय है – शून्य शीर्षक से
स्वीकार है मुझे शून्य होना, हाँ, स्वीकार है तुच्छ होना,
स्वयं जो अस्तित्वहीन होकर समूचे ब्राह्मण्ड का निर्माण कर दें।
ओजपूर्ण है ऐसा शून्य होना।।
साथ देने पर आँऊ तो मूल्य बढ़ा दूँ, नष्ट करना चाहूं तो विलोप वहीं कर दूँ,
गौरवान्वित है ऐसा शून्य होना।।
पूरी ना हो मुझ बिन कोई गणना, मुझ बिन सम्भव कोई अनुमान नहीं
दुःख सुख स्त्रोत सभी में होंऊ। जिसका ना हो मापन वो अंतरिक्ष मैं होंऊ
सौन्दर्यपूर्ण है ऐसा शून्य होना, हाँ स्वीकार है मुझे अमूल्य होना।

समस्त कायनात को चलाने वाली नारी

कायनात यदि चल रही है तो इसलिए कि स्त्री चाहती है। सृष्टि का चक्र ठीक चल रहा है, ममता, धर्य, भरोसा बचा हुआ है तो कायनात चल रही है, क्योंक स्त्री ऐसा चाहती है। वहीं ऐसा चाहती है, क्योंकि उसके पास वे क्षमताऐं है। स्त्री ने हर मुश्किलों से पार पाकर देखा है। स्त्री प्रकृति द्वारा असंख्य, अद्‌भुत एवं असाधारण गुणों से नवाजी गई है। नारी का मुकाबला तो पुरूष किसी भी स्तर पर कर ही नहीं सकता। तकनीक पुरूष को गर्भ धारण तो करवा सकती है, लेकिन शिशु जन्म के नौ महीनें तो क्या नौ दिन भी बिता लेने का सामर्थ्य कहां से लाएगी। यह तो बादलों में बीज बोने वाली बात हुई। पल्लवन का वो धैर्य, वो स्नेह केवल स्त्री के पास होता है। धरा स्वरूप स्त्री के पास। गृह संचालन के सारे काम सुचारू किसकी बदौलत है? दफ्‌तरो में किसकी कार्य क्षमता निर्विवाद है। तनाव से जीतने की खूबी किसमें है? नेतृत्व में बेहतर कौन है? इन समस्त सवालों का जवाब है – केवल और केवल स्त्री।

'न गृहम गृहमित्याहुः गृहिणी गृहमुच्यते' महाभारत के शान्तिपर्व की यह उक्ति कहती है कि घर को घर नहीं कहते, गृहिणी को ही घर कहते हैं। अर्थात् गृहिणी के बिना घर–घर नहीं होता है। हालांकि मकान को घर बनाने की काबिलियत केवल स्त्री में ही होती है। जो महिला घर चला सकती हैं वह बड़ी से बड़ी कंपनी भी चला सकती है। यह महज उदाहरण नहीं अपितु तथ्य है। यह ऐसा तथ्य है जो आज के वक्त बार–बार

साबित हो रहा है। कम्पनियों के बोर्ड रूम में और सीईओ के पद पर महिलाओं की बढ़ती संख्या यह बताने को काफी है कि वे क्या कर सकती हैं। भले ही विज्ञान हर व्यवहार की जड़ मस्तिष्क में देखता है, परंतु स्त्री की कोमलता, संवेदनशीलता, समानुभूति, सदाशयता और त्याग आदि बर्तावों को दिल से जोड़ा जाता है। वे दिन लद गए जब इन अच्छाइयों को कमजोरियां माना जाता था। योग्यता कूटनीतिज्ञों से भरे राजदरबारों में साबित होती थी या युद्ध के मैदानों में। पर आज के लोकतांत्रिक और अपेक्षाकृत सभ्य संसार में स्त्रीगुणों की अहमियत और जरूरत दोनों महसूस की जा रही है। डंडे के बल पर हांकने वाले बॉस की बजाय सबका ख्याल रखने और सबको साथ लेकर चलने वाले लीडर की मांग बढ़ रही है। अब तो दुनियां में भी कई कामों के लिए आई.क्यू. बौधिक क्षमता से ज्यादा ई. क्यू. भावनात्मक योग्यता की मांग की जाने लगी है। एक स्त्री में यह स्वाभाविक गुण पहले से ही विद्यमान होता है। दस लाख साल के मानव इतिहास में अपनी जिम्मेदारियों को निभाते हुए उसने रंगो की परख, गंध को तोड़ने की क्षमता, मनोभावों को पढ़ पाने का हुनर और सबसे बढ़कर छठी इन्द्रिय जैसी उपलब्धियॉ अर्जित की है।

नारी की सार्थकता में ही समय की सार्थकता है

घर परिवार की ढ़ेरों जिम्मेदारियाँ सम्भालने वाली स्त्री के बारे में कभी नहीं सुना कि काम के बोझ से वह बीमार पड़ गई या उसने आत्महत्या कर ली। सबसे अनोखी बात यह है कि चौबीसों घंटे की ड्यूटी में उसे कभी भी छुट्टि नहीं मिलती, फिर भी उसका काम कभी गड़बड़ाता नहीं। महिलाओं के लिए मल्टीटासकिंग यानी एक ही समय में कई काम करना और समय प्रबंधन अनिवार्य होता है। कारण स्पष्ट है कि उनकी यानि महिलाओं की जिम्मेदारियां इस कोटि की होती है कि न तो उनमें ढ़िलाई बरती जा सकती और न ही उन्हें टाला जा सकता है और न ही कोई रियायत ली जा सकती है। माँ लाख कामों में व्यस्त हो, बच्चे के खान–पान के समुचित इंतजाम से पूरी तरह कैसे निरपेक्ष रह सकती है? स्त्री परम्परागत रूप से जो कार्य करती आई है, उनमें कभी किसी तरह की कोताही की गुंजाइश ही नहीं रही। पुरूष यदि एक महिने तक अपनी दुकान ना भी खोले तो पूर्व की बचत से काम चलता रहता है। पर रसोई, सफाई, बच्चों एवं बुर्जुगों की देखभाल जैसे काम एक दिन के लिए भी बंद नहीं हो सकते। इसलिए उसने तनाव न लेते हुए फटाफट काम करने का हुनर विकसित कर लिया। आज जब वह बाहर की जिम्मेदारियां भी बराबर संभाल रही है तो भी अपने घरेलू दायित्वों को छोड़ती नहीं है, बल्कि पुरूष से बस थोड़ा सा सहयोग चाहती है। कपड़े धोने लगे तो अमूनन उसे दूध का भी खयाल रहता है। मनोयोग से खाना बनाने के बावजूद वह कभी भी इतना खो नहीं जाती कि बुजुर्ग सास–ससुर को दवा देने का

ख्याल ही न रहे। उनका काम बड़े ही योजनाबद्ध तरीके से चलता है। वे तो खाली बैठकर केवल मनोरंजन भी नहीं करती। टीवी देखते समय सब्जियाँ काटती रहती है। स्वेटर आदि बुनती रहती हैं या बच्चों से स्कूल का हिसाब लेती रहती हैं। इसमें कोई आश्चर्य नहीं कि घर के तमाम काम काज करते हुए भी लड़कियाँ परीक्षाओं में अच्छे अंक ले पाती हैं। साऊथ वेल्स की महिला लीन क्राइंग ने अपनी स्टड़ी में यह शोध की कि कामकाजी पुरूषों के मुकाबले कामकाजी महिलाएं घर और बच्चों को ज्यादा समय देती है।

नारी आत्मसम्मान व स्वाभिमान की साक्षात मूर्ति है

नारी स्वाभिमान की साक्षात् मूर्ति है। वह स्वाभिमान में जीकर महिला सशक्तीकरण का रास्ता सुगम करती है। नारी मनोवृत्ति का परिचय इन पंक्तियों में द्रष्टव्य है। ''मैं तुम्हारी या किसी और की दी हुई उधार की जिंदगी नहीं जीना चाहती। अपनी जिंदगी जीना चाहती हूँ। पूरी तरह अपनी''। प्रसिद्ध कवयित्राी सुभद्रा कुमारी चौहान आह्वाहन करती हैं – स्त्री के हृदय को पहचानों और उसे चारों और फैलने और विकसित होने का अवसर दो, यह न भूल जाओ कि उसका अपना भी एक व्यक्तित्व है। मशहूर लेखक शेक्सपीयर से उनके विवाह की 25 वीं वर्षगांठ पर उनके मित्र ने जब पूछा कि आपकी सफलता का राज क्या है? तो उनका जबाब काबिले गौर और हैरान करने वाला था। उन्होंने कहा ''मेरी सफलता का राज यह है कि मेरी पत्नी अपने रास्ते पर चलती है और मैं उसके रास्ते पर''। इसी प्रकार एक अन्य विश्वप्रसिद्ध पाश्चात्य साहित्यकार हैनरी फिल्डिंग ब्यां करते हैं – ''उनके साहित्य में दिमाग तो था पर उसे धड़कन तब मिली जब उनकी पत्नी ने दिल की महीन–महीन संवेदनाओं का ताना बाना बुनकर साहित्य को नवजीवन दिया''। हिंदी साहित्य जगत की प्रसिद्व कवयित्री सुश्री महादेवी वर्मा लिखती हैं –''दापंत्य जीवन पत्नी के द्वारा पति का सतत् सृजन है, वह नियति नहीं निर्माण है।'' पूर्व प्रधानमंत्री पं. जवाहर लाल नेहरू जी के अनुसार – ''एक बालक को शिक्षित करने का मतलब है एक व्यक्ति को शिक्षित करना जबकि एक बालिका को शिक्षित करने का मतलब संपूर्ण परिवार को शिक्षित करना है''। दरअसल एक बालिका की शिक्षा–दीक्षा तो एक दीपक प्रज्जवलित करने के समान है, यह दीपक प्रकाश तो प्रदान करता ही है, साथ ही अपनी लौ से अनवरत् नये–नये दीपकों को भी जलते रहने का पथ प्रदान करता है जो इस प्रकाश को कई गुना बढ़ाते चलते जाते हैं। पूर्व प्रधानमंत्री राजीव गांधी ने महिलाओं के सशक्तीकरण के लिए अनेक महत्वपूर्ण कदम उठाये। उन्होंने राजनीति में 33 प्रतिशत महिला आरक्षण की वकालत की। नौकरियों के लिए विशेष कारगर कदम उठाये। उन्होंने महिला शिक्षा पर पूरा फोकस किया। उनका विचार था कि अगर एक महिला शिक्षित होती है तो उससे

दो परिवार शिक्षित होते हैं। इसलिए महिलाओं को शिक्षित करने के लिए पुरजोर प्रयार करते रहना चाहिये। प्रसिद्ध लेखिका कमलेश शर्मा सभी माता–पिता जो अपनी संतान के प्रति भेदभाव रखते हैं, को अगाह करते हुए कहती हैं कि पुत्री तो दो घरों का श्रृंगार होती है। उनकी निम्नलिखित पक्तियाँ महिला सशक्तीकरण हेतु सटीक बैठती हैं – ''रोशन करता है बेटा एक कुल को, दो दो कुलों की लाज निभाती हैं बेटियाँ। हीरा अगर बेटा है तो मोती हैं बेटियाँ।''

ताउम्र नारी की महति सहभागिता

जीवन की पूर्णता एवं क्रमबद्धता बनाये रखने के लिए युगीन वातावरण एवं परिस्थितियों की महती भूमिका रहती है। संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा वर्ष 1975 को अन्तर्राष्ट्रीय महिला दिवस की घोषणा कर संसार के क्षितिज पर महिला सशक्तीकरण की बुनियाद रखी गई। सन् 1789 की फ्रांस क्रांति ने समानता, सह अस्तित्व, बन्धुत्व भावना तथा अधिकारों के प्रति सजगता का पाठ पढ़ाकर महिलाओं की जड़ चेतना को बुद्धि सम्यक बनाया जिससे समयानुकूल पुरूष की अंहनमयता पर कुठाराघात कर समानाधिकार का मार्ग प्रशस्त किया जाने लगा। 19वीं शताब्दी से प्रारम्भ हुआ सुधारवादी आंदोलन महिलाओं की सहभागिता से दिन दोगुनी रात चौगुनी उत्तरोत्तर समृद्ध होता गया। महिला सशक्तीकरण के विविध आयामों में राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, साहित्यिक, ज्ञान, विज्ञान, कला एवं प्रौद्योगिकी, कानून, चिकित्सा, सिनेमा, स्वतंत्र अभिव्यक्ति, मार्केटिंग आदि का क्षेत्र सम्मिलित किया जाता है जिससे महिला भागीदारी को भली भांति समझा जा सकता है। यह तो सर्वविदित है कि नारी की सक्रिय भूमिका को संकुचित रखने के दुष्परिणाम केवल नारी जाति तक सीमित नहीं रहे अपितु मानवमात्र को समान रूप से प्रभावित करते हैं। इतिहास तो इसका प्रत्यक्ष प्रमाण है। नारी की उपेक्षा का प्रतिफल हृदय विप्लव के साथ–साथ राष्ट्र विप्लप के रूप में सामने आता है।

सन् 1995 में चीन के बीजिंग शहर में सम्पन्न विश्व सम्मेलन मताधिकार तथा मानवाधिकारों के प्रति जागरूकता पर केन्द्रित था। प्रगतिशील समाजरूपी वृक्ष के लिए महिलाओं की सहभागिता खाद का कार्य करती है। किसी समाज की उन्नति का अनुमान इस बात से लगाया जा सकता है कि उस समाज की महिलाओं की उन्नति कितनी हुई है। शिक्षा वह दीपक है जो मानव जाति को अंधकार से प्रकाश की ओर, मृत्यु के दौर से अमरता के रास्ते पर तथा अज्ञान से ज्ञान की तरफ अग्रसर होने का सुगम रास्ता प्रदान करता है। अतः अंधकार की आलोचना करने से बेहतर है कि हम ज्ञान का दीप प्रज्जवलित करें। अनिवार्य शिक्षा, सर्वशिक्षा अभियान, प्रौढ़ शिक्षा, नैतिक शिक्षा, निःशुल्क शिक्षा से महिलाओं के दृष्टिकोण में परिवर्तन आने लगा है। अभिव्यक्ति

की स्वतंत्रता शिक्षा द्वारा ही संभव हो सकी है। आत्मनिर्भर होने पर ही महिला शारीरिक शोषण से मुक्त हो पाती है क्योंकि देह की आजादी स्त्री की आजादी का प्रथम सोपान माना जाता है।

संदर्भ

1. दवे, रमेश : शिक्षा और चेतना, महामिडिया, जुलाई 2011 भोपाल।
2. सिंह जी. डी : कानूनी अधिकारों के प्रति महिला जागरूकता का अध्ययन, संचयिका विशेषांक 2011।
3. भार्गव, प्रमोद मुस्लिमों की आधी आबादी को आजादी, सामान्य ज्ञान दर्पण मई 2018।
4. भंडारी, ऊषा : समाज और शब्द निर्माण में नारी का अतुलनीय योगदान, जान्हवी दिसम्बर 2019।
5. रजी, शाहीन : सशक्त महिला सशक्त समाज, योजना, मार्च 2019।
6. मालती, एम.पी : महिला सशक्तीकरण, कम्पीटिशन सक्सेस रिव्यू जनवरी 2018।

सर्वपल्ली राधाकृष्णन

"हमें मानवता को उन नैतिक जड़ों तक वापस ले जाना चाहिए जहां से अनुशासन और स्वतंत्रता दोनों का उदगम हो।"

"शिक्षा का परिणाम एक मुक्त रचनात्मक व्यक्ति होना चाहिए जो ऐतिहासिक परिस्थितियों और प्राकृतिक आपदाओं के विरूद्ध लड़ सकें।"

"किताब पढ़ना हमें एकांत में विचार करने की आदत और सच्ची खुशी देता है।"

माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत् आंशिक रूप से श्रवण बाधित बालक एवं बालिकाओं कि सामाजिक विज्ञान विषय में शैक्षिक उपलब्धि पर सक्रिय अधिगम प्रविधि के प्रभाव का अध्ययन

राजेश कुमार मौर्य
–उषा भटनागर

किसी भी राष्ट्र की उन्नति उसकी शिक्षा पर निर्भर करती है। शिक्षा जीवन को प्रगतिशील एवं सुसंस्कृत बनाने का एक सशक्त माध्यम है। व्यवस्थित रूप से शिक्षा प्रदान करने का सबसे सुदृढ़ माध्यम विद्यालय है। विद्यालय ज्ञान प्रवर्तन के प्रमुख केन्द्र होते हैं। यह एक ऐसा स्थान है जहां सभ्यता एवं सस्कृति का सरंक्षण एवं हस्तान्तरण होता है।

अधिगम निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया है, इसका मुख्य केन्द्र बालक एवं बालिकाएं होती हैं। विद्यार्थियों के सर्वागींण विकास का दायित्व शिक्षक पर होता है। वर्तमान में देखा जा रहा है कि विद्यालय में शिक्षण औसत विद्यार्थियों के अनुसार ही होता है जबकि कक्षा में सामान्य के साथ विशिष्ट आवश्यकता वाले विशिष्ट बालक भी होते हैं। विशिष्ट अर्थात विशेष आवश्यकता वाले बालकों को विशेष शिक्षण की आवश्यकता होती है ताकि ये बालक सक्षम बन सकें। वे भी समाज के अन्य बालकों के साथ आगे बढ़ें इसके लिए आवश्यक है, कि आंशिक श्रवण बाधित बालकों के लिए भी ऐसी शिक्षण विधि हो ताकि उन्हें सक्रिय बनाया जा सके।

शिक्षण अधिगम प्रक्रिया

शिक्षण प्रक्रिया में शिक्षक एवं छात्र दोनों ही सक्रिय रहते हैं और उनके मध्य शाब्दिक और अशाब्दिक अन्तःक्रिया चलती रहती है। इस प्रक्रिया में बालक एवं बालिकाओं को तर्क करने, वार्तालाप करने, प्रश्न करने, उत्तर पाने का अवसर मिलता है। शिक्षण अधिगम प्रक्रिया पहले द्विमुखी हुआ करती थी, जिसमें छात्र एवं शिक्षक होते थे, जिनके बीच विचारों का आदान–प्रदान होता था। किन्तु आगे चलकर यह प्रक्रिया त्रिमुखी हो गई, जिसमें बालक, शिक्षक एवं पाठ्यक्रम को सम्मिलित किया गया। इसके अन्तर्गत बालक शिक्षक के माध्यम से पाठ्यक्रम में दी गई विषयवस्तु का अधिगम करता है।

आंशिक श्रवण बाधित

आंशिक श्रवण बांधित बालकों को ऊँचा सुनाई देता है। इनकी समस्याएं भी बहरे बालकों से मिली जुली ही होती हैं किन्तु समय पर इनके रोग की पहचान होने पर उपचार होने की संभावना रहती है। ऐसे बालक श्रवणयंत्रों की सहायता से सुन सकते हैं।

सक्रिय अधिगम प्रविधि का अर्थ

सक्रिय अधिगम प्रविधि वह है, जिसमें विद्यार्थी कक्षागत क्रियाओं में स्वयं सहभागी बनकर ज्ञान अर्जित करते है। इसमें शिक्षक की भूमिका एक मार्गदर्शक के रूप में होती है जो अपने

विद्यार्थियों के लिए कक्षा में ऐसे अवसरों का निर्माण करता है, जिसमें उसके विद्यार्थी विषयवस्तु का ज्ञान पूर्ण सक्रियता के साथ प्राप्त कर सकें।

पाठयोजना के प्रारूप

सक्रिय अधिगम प्रविधि (ALM) के अन्तर्गत विषयवस्तु की अवधारणा की आवश्यकता के अनुरूप निम्नलिखित में से किसी भी प्रारूप का उपयोग किया जा सकता है।

1. स्व अध्ययन प्रारूप
2. समूह अध्ययन प्रारूप
3. SQ4R प्रारूप
4. चित्र चॉक एवं चर्चा प्रारूप
5. TIGER (टाइगर) प्रारूप

शैक्षिक उपलब्धि

शिक्षा का उद्देश्य बालकों के व्यवहार में अपेक्षित परिवर्तन लाना है। यह एक उद्देश्यपूर्ण प्रक्रिया है। विद्यालय में विद्यार्थी के व्यवहार में परिवर्तन की जानकारी शैक्षिक उपलब्धि से प्राप्त होती है। अतः कहा जा सकता है कि शैक्षिक उपलब्धि की प्राप्ति ही शैक्षिक उपलब्धि है। इससे यह समझ में आता है कि बालकों ने किस सीमा तक उद्देश्य को प्राप्त किया है। अर्थात विद्यार्थियों द्वारा अर्जित ज्ञान, बोध ा कौशल एवं अनुप्रयोग आदि की योग्यताओं की मात्रात्मक अभिव्यक्ति शैक्षिक उपलब्धि ा कहलाती है। विद्यालयों में प्रायः शैक्षिक उपलब्धि मासिक, त्रैमासिक एवं वार्षिक परीक्षाओं में प्राप्त अंकों के आधार पर की जाती है।

शोध का उद्देश्य एवं परिकल्पना

इस शोधकार्य का उदेश्य "आंशिक श्रवण बाधित बालक एवं बालिकाओं की सामाजिक विज्ञान विषय में शैक्षिक उपलब्धि पर सक्रिय अधिगम प्रविधि के प्रभाव का अध्ययन करना" है। अतः इसकी परिकल्पना ''आंशिक श्रवण बाधित बालक एवं बालिकाओं की सामाजिक विज्ञान विषय में शैक्षिक उपलब्धि पर सक्रिय अधिगम प्रविधि का कोई सार्थक अंतर नहीं होगा'' है।

सीमांकन

1. सक्रिय अधिगम प्रविधि सभी स्तर की कक्षाओं के लिए आवश्यक है परन्तु प्रस्तुत शोधकार्य में केवल आंशिक श्रवण बाधित विद्यार्थियों का ही चयन किया गया है।
2. प्रस्तुत शोध में माध्यमिक स्तर पर कक्षा 8वीं में अध्ययनरत् 13+ आयु स्तर के आंशिक श्रवण बाधित विद्यार्थियों को सम्मिलित किया गया है।

पूर्व शोध

- मोड़, प्रिती (2010) "इन्दौर शहर के मूकबधिर विद्यार्थियों की बुद्धि व समायोजन के संबंध तथा उनकी समस्याओं का अध्ययन"।

- साकोरीकर, रुचिता (2015) "शासकीय माध्यमिक विद्यालयों में परम्परागत शिक्षण विधि एवं सक्रिय अधिगम प्रविधि के शिक्षण का तुलनात्मक अध्ययन" है।

शोध विधि – प्रयोगात्मक

न्यादर्श – शासकीय एवं अशासकीय श्रवण बाधित विद्यालय के न्यादर्श के रूप में 35 विद्यार्थियों का आवश्यकतानुसार चयन किया गया जो कि आंशिक रूप से श्रवण बाधित थे।

उपकरण – स्वनिर्मित सामाजिक विज्ञान उपलब्धि परीक्षण । (विश्वसनीयता = 0.97, वैधता = 0.80)
सक्रिय अधिगम प्रविधि कार्यक्रम (अभिक्रिया के रूप में)

परिणाम एवं विवेचना

प्रस्तुत शोध का उद्देश्य "आंशिक श्रवण बाधित बालक एवं बालिकाओं की सामाजिक विज्ञान विषय में शैक्षिक उपलब्धि पर सक्रिय अधिगम प्रविधि का अध्ययन करना" हैं।

प्रदत्तों का विश्लेषण, मध्यमान प्रमाणिक विचलन एवं टी परीक्षण द्वारा किया गया है। परिणाम तालिका में प्रस्तुत किये गये हैं।

आंशिक श्रवण बाधित बालक एवं बालिकाओं की सामाजिक विज्ञान विषय में शैक्षिक उपलब्धि पर सक्रिय अधिगम प्रविधि के प्रभाव का मध्यमान,प्रमाणिक

विचलन एवं टी मान				
लिंग	संख्या	मध्यमान	प्रमाणिक विचलन	टी मान
बालक	18	24.88	4.91	2.12
बालिकाएं	17	36.72	1.27	
सार्थकता स्तर 0.05			स्वतंत्र अंश 34	

तालिका में प्रदर्शित आंशिक श्रवण बाधित बालक एवं बालिकाओं की सामाजिक विज्ञान विषय में शैक्षिक उपलब्धि पर सक्रिय अधिगम प्रविधि का प्रभाव देखा गया। उपरोक्त तालिका के अवलोकन से ज्ञात होता है कि टी का मान 2.12 है जबकि स्वतंत्र अंश 34 है। टी परीक्षण का मान 0.05 पर सार्थक है। सारणी में प्रस्तुत बालकों का मध्यमान 24.88 तथा प्रमाणिक विचलन 4.91 है तथा बालिकाओं का मध्यमान 36.72 तथा प्रमाणिक विचलन 1.27 है। तालिका से स्पष्ट होता है कि बालकों का मध्यमान बालिकाओं के मध्यमान की अपेक्षा कम है।

इसका अर्थ है कि आंशिक रूप से श्रवण बाधित बालक एवं बालिकाओं की सामाजिक विज्ञान विषय की शैक्षिक उपलब्धि निश्चित रूप से बड़ी है किन्तु सक्रिय

अधिगम प्रविधि कार्यक्रम का प्रभाव मध्यमान के आधार व बालकों की अपेक्षा बालिकाओं पर अधिक पड़ा है जो कि कार्यक्रम की प्रभाविता को प्रदर्शित करता है।

अतः परिकल्पना आंशिक श्रवण बाधित बालक एवं बालिकाओं की सामाजिक विज्ञान विषय में शैक्षिक उपलब्धि पर सक्रिय अधिगम प्रविधि का कोई सार्थक अंतर नहीं होगा, "निरस्त की जाती है।"

निष्कर्ष

इस शोध कार्य से यह निष्कर्ष प्राप्त हुआ कि आंशिक रूप से श्रवण बाधित बालक और बालिकाओं की सामाजिक विज्ञान विषय में शैक्षिक उपलब्धि पर सक्रिय अधिगम प्रविधि का प्रभाव निश्चित रूप से पडा है किन्तु बालकों की अपेक्षा बालिकाओं पर अधिक पडा है जो कि कार्यक्रम की प्रभाविता को प्रदर्शित करता है।

सुझाव

- आंशिक श्रवण बाधित बालकों की पहचान कैसे की जाये, शिक्षकों को इस हेतु आवश्यक प्रशिक्षण प्रदान करना होगा।
- आंशिक श्रवण बाधित होने के कारणों को जानकर आवश्यकतानुसार चिकित्सकीय परामर्श की सुविधा उपलब्धि करानी होगी।
- विशेष विद्यालयों के शिक्षकों को सेमिनार एवं कार्यशाला के माध्यम से नवाचारयुक्त शिक्षण विधियों से अवगत कराना होगा।
- विशेष विद्यालय में श्रवण बाधित विद्यार्थियों के शिक्षण हेतु आवश्यकतानुसार सक्रिय अधिगम प्रविधि का उपयोग करना होगा।
- श्रवण बाधित बालकों के शिक्षण हेतु शिक्षकों का प्रशिक्षण हो।
- समेकित क्षिा व्यवसाय में भी श्रवण बाधित विद्यार्थियों की बैठने की उचित व्यवस्था हो।

संदर्भ

1. अग्रवाल, जी : विकलांगता समस्या और समाधान, निधि प्रकाशन, 1981।
2. ओसवाल, जी. : प्रगत शिक्षा मनोविज्ञान–प्रथम संस्करण, हिन्दी माध्यम कर्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, 2005।
3. बैस, नरेन्द्र सिंह एवं सुसंकार भागीदार : विशिष्ट वर्ग के बालकों की शिक्षा, जैन प्रकाशन मन्दिर, जयपुर, 2008।
4. सरीन, शशिकला एवं सरीन अंजली : शैक्षिक अनुसन्धान विधियां, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा–2, 2007।
5. शिक्षक प्रशिक्षण सन्दर्शिका "सक्रिय अधिगम प्रविधि", मध्यप्रदेश राज्य शिक्षा केन्द्र, भोपाल (2009)।
6 Active Learning Methodology, Sarva Shiksha Abhiyan, Tamilnadu in Partnership with the School, Krishnamurti Foundation India, Chennai.

महात्मा गांधी की नई तालीम का समाजशास्त्र

मनोज कुमार राय

19वीं सदी के बौद्धिकों द्वारा औपनिवेशिक शिक्षा–प्रणाली का विरोध करना स्वतंत्रता आंदोलन का एक महत्वपूर्ण हिस्सा था। तब के अनेक दार्शनिकों, राजनीतिज्ञों, कलाकारों, समाज–सुधारकों, लेखकों ने इस विरोध को अपने–अपने तरीकों से धार भी दिया था। पर जिस शिद्दत – तर्क – अभिनिवेश प्रक्रिया के साथ उसकी संपूर्णता में गांधी ने इसका विरोध और विकल्प रखा वैसा किसी ने नहीं किया। गांधी की खूबी थी कि वे कोई बात कहते या रखते थे तो सिर्फ गले के जोर से नही अपितु तर्क और प्रयोग के आधार पर। सच तो यह है कि जीवन का कोई ऐसा हिस्सा नहीं होगा जिधर गांधी की दृष्टि न गयी हो और उन्होंने उस पर अपना विचार न रखा हो। वस्तुतः गांधी ने इन सभी बिन्दुओं पर न सिर्फ अपना विचार रखा अपितु अपने प्रयोगशाला में खराद पर कसा भी। लगभग चालीस वर्ष की ईमानदार साधना और प्रयोग के बाद उन्होंने इसे एक मुकम्मल रूप देने का प्रयास किया। इसे ही हम नई तालीम अथवा बुनियादी शिक्षा के नाम से जानते हैं। नई तालीम के माध्यम से गांधी एक ही साथ कई चीज साधना चाहते थे। आजादी की लड़ाई के साथ–साथ स्वदेशी–स्वावलंबन, अहिंसात्मक जीवन–शैली, रचनात्मक–सामंजस्य, देशज–चिंतन, भारतीयता की पहचान और मुनष्यता का संपूर्ण विकास उनका ध्येय था। प्रस्तुत आलेख में हम उनके इसी नजरिये को जानने का प्रयास करेंगे।

अँग्रेजी साम्राज्य से पूर्व भारत में कला–शिल्प और अन्य सेवाओं से जुड़े लोगों की समाज में प्रतिष्ठा थी। समाज इन्हें कलाकार, शिल्पकार और विश्वकर्मा के नाम से पुकारता–जानता था। विभिन्न प्रकार के शिल्पों से पारंपरिक रूप से विभिन्न जातियाँ भी जुड़ी थीं। उन सबके भीतर एक जैविक–तंतु का ताना बाना होता था जो भारतीय गाँव की पारिस्थितिकी को संतुलित किए रहता था और वे परस्पर सहयोग–पूर्वक अपना जीवन यापन करते थे। अंग्रेजों से पहले भी भारत पर आक्रमण हुए थे। पर वे आते थे और लूटपाट कर लौट जाते थे। मुगल–गुलाम वंश आदि शासक यहाँ रूक गए तो वे यहाँ की परंपरा और जीवन–पद्धति के सहयात्री भी बन गए। पर अंग्रेजों का रवैया कुछ अलग–अलग सा था। 'अंग्रेज जब भारत में आए तो यहाँ की चीजों को ज्यों का त्यों स्वीकार करके आगे बढ़ाने के बजाय

उन्होंने उनका मूलोच्छेदन करना शुरू किया। उन्होंने मिट्टी पलटकर जड़ देखना शुरू किया, लेकिन बाद में फिर उस जड़ पर मिट्टी नहीं डाली और नतीजा यह की वह सुंदर वृक्ष नष्ट हो गया।' उन्होंने सर्वप्रथम यहाँ के ताने–बाने को ही कमजोर करने की कोशिश की। इसके लिए उन्होंने शिक्षा व्यवस्था का सहारा लिया और एक नये किस्म का वर्गीकरण किया। शिक्षा मंहगी हुई। अब वह कुछ खास लोगों तक ही सीमित हो गई है। इन स्कूलों में न जाने वाला तबका लगातार पिछड़ता चला गया। फलस्वरूप श्रम से जुड़े लोग जातिगत तौर पर हीनतर समझे जाने लगे और बाबूगिरी करने वाले समाज–व्यवस्था की अगली कतार में खड़े हो गए। इसका सबसे बड़ा प्रमाण यह है कि आज भी हम किसी व्यक्ति के नाम के आगे 'बाबू' जोड़कर उसे सम्मान देते हैं। जबकि 'बाबू' शब्द का सीधा अर्थ 'क्लर्क' ही होता है और अंग्रेजों ने इसी अर्थ में इसका प्रयोग भी किया था।

भारतीय आर्य–चिंतन का सूत्र 'सा विद्या या विमुक्तये' गांधी के शिक्षा दर्शन का केंद्रीय तत्त्व है। उनके अनुसार, 'ज्ञान में वह समस्त प्रशिक्षण समाहित है जो मानव जाति की सेवा के लिए उपयोगी है और विमुक्ति का अर्थ है वर्तमान जीवन की भी सभी प्रकार की पराधीनताओं से मुक्ति अर्थात 'अर्थ' से लेकर 'मोक्ष' तक है। 'अर्थ' का सीधा अर्थ है आर्थिक–सामजिक–राजनीतिक रूप से सशक्त और आत्मनिर्भर होना। 'मोक्ष' के बारे में गांधी का कथन है, 'मेरे लिए अपने देश सेवा और उसके द्वारा समूची मानवता की अथक सेवा ही मोक्ष का मार्ग है।' इतिहास में गांधी पहले ऐसे व्यक्ति हैं जिन्होंने सेवा को मोक्ष का पर्याय माना है। इतना ही नही बुद्ध के 'निर्वाण' को भी वे 'अहंकार–मुक्ति' अर्थात रजवत हो जाना ही मानते हैं।

गांधी दूरद्रष्टा थे। तीन–तीन महाद्वीपों की शिक्षा–व्यवस्था को उन्होंने 'नई–तालीम' की अवधारणा के अन्तर्गत सभी के समक्ष रखा था। गांधी के इस प्रस्ताव का मूल बिंदु था स्कूल–पाठ्यक्रम में उत्पादन–शिल्प को सम्मिलित करना। उनका मानना था कि यह विचार सिर्फ सूचनात्मक अथवा संकेतात्मक न होकर उसका आधार वैज्ञानिक होना चाहिए। 'आज की तरह दस्तकारी की शिक्षा केवल यांत्रिक रूप से न दी जाय, बल्कि वैज्ञानिक विधि से दी जाय अर्थात् बच्चे को हर प्रक्रिया के बारे में यह मालूम होना चाहिए कि वह किसलिए की गई।' दरअसल गांधी अपने इस प्रयास से समाज के बिखरे–छिटके धागों को पुनः संजोना चाहते थे। अंग्रेजों के आगमन के साथ ही एक नई प्रणाली का इस देश में विकसन हुआ जिसमें 'श्रम' को हेय दृष्टि से देखने की प्रवृति बढ़ी। ऐसा नहीं था कि यह सब अचानक से हुआ

था। इसकी नींव तो बहुत पहले ही पड़ चुकी थी जब इस देश के स्वनामधन्यों ने ऊंच–नीच के तहत 'भारतीयता' के धागे को ऐंठन देने की कोशिश की थी और वे उसमें सफल भी रहे थे। हम सब जानते हैं कि लोक–शिल्प से जुड़े अधिकांश पेशा तथाकथित रूप से ऊंची जाति हो अथवा अंग्रेज दोनों ने उसी परंपरागत ज्ञान और कौशल पर जोर दिया जिनसे उनका सीधा सरोकार था। उत्पादन से जुड़े तमाम शिल्पों की तरफ कोई ध्यान नहीं दिया गया। परिणाम यह हुआ कि 'जो देश अंग्रेजों के आने से पूर्व शिल्प–कला उद्योग में शीर्ष पर था, जिसकी स्टील की गुणवता विदेशी स्टील से कही बेहतर थी, शिक्षण कला और जहाज निर्माण कला में भी जो बहुत आगे था', वह धीरे–धीरे दूसरों पर आश्रित होता चला गया। गांधी ने इसे बड़े नजदीक से महसूस किया। इसीलिए उन्होंने नई तालीम के माध्यम से न केवल उस विशिष्ट कला–कौशल के पुनर्जागरण की कोशिश की जिनमें कुछ तो कई हजार वर्षों से गांव के ही सरहद पर देश निकाला का जीवन जी रहे थे।

गांधी ने जिस नई तालीम की योजना हमारे सामने रखी थी वह उनके वर्षों के चिंतन–मनन का परिणाम थी जिसकी शुरूआत दक्षिण अफ्रीका के संघर्ष के दिनों में ही हो चुकी थी जब उन्होंने 'फीनिक्स' और कुछ समय बाद 'टालस्टाय' फार्म की स्थापना की थी। दोनों फार्म के नाम से ही हम उनकी गंभीरता का अंदाजा लगा सकते हैं। 'फीनिक्स' एक चिड़िया का नाम है जो अपने राख से पुनः जन्म ले लेती है। गांधी इसी तर्ज पर भारत में नई तालीम के माध्यम से उसके शिल्प और साहचर्य जीवन को पुनः स्थापित करना चाहते थे जिसका क्रम टूट चुका था। टालस्टाय उस समय के सबसे बड़े लेखक के रूप में प्रसिद्ध थे। मानवता की सेवा और हिंसा के विरूद्ध उनके लेखन की धूम थी। गांधी से उनका पत्र–व्यवहार भी हुआ था। प्रो. कृष्ण कुमार ने अपने एक आलेख में यह बताया कि गांधी 'टालस्टाय' की शिक्षा के प्रति उनके महत्वपूर्ण विचार 'Education as a premeditate formation of men according to certain patterns is sterile, unlawful and impossible' से प्रायोगिक तौर पर इत्तिफाक रखते हैं। लेकिन तब तक गांधी ने उनके द्वारा लिखे इस आलेख को नहीं पढ़ा था। बाद में गांधी ने स्वयं यह लिखा भी कि 'नए संसार की रचना के लिए शिक्षा भी नई तरह की होनी चाहिए।'

गांधी के लिए नई तालीम एक शांत सामाजिक क्रांति है, जो धीरे–धीरे अपना काम करती है। वे अपने संघर्ष के दिनों में ही समझ गए थे कि तालीम को

नौकरशाही के गुलामी से मुक्त होना ही चाहिए। वरना राज्य अपने हिसाब से पाठयक्रम बनाएगा और उसे पढ़ाने की व्यवस्था करेगा। खास तौर से औपनिवेशिक राज्य में यह व्यवस्था अपने चरम पर पहुँच जाती है। गांधी इसके भुक्तभोगी थे। इसीलिए उनकी दृष्टि में आदर्श समाज वह है जो छोटा और आत्मनिर्भर हो। उनकी इस कल्पना का मूर्त रूप भारतीय गाँव थे। उनकी दृष्टि में शहरीकरण ने गाँव के परस्पर सहयोग के ताने–बाने को तोड़ा है और उसका भरपूर शोषण किया है। नई तालीम के तहत गाँव के विकास के साथ–साथ वहाँ के बच्चों के लिए प्रशिक्षण की व्यवस्था होगी जिससे वे अपने को हुनरमंद बना सकें तथा अपनी जरूरत के साथ–साथ स्थानीय समुदाय के बाद सहकार स्थापित कर सकें। यह सहकार उन्हें समाज के साथ घुलने–मिलने में मदद करने के साथ–साथ आत्मनिर्भर भी बनाएगा। वह कहते हैं कि 'मेरी नई तालीम धन पर निर्भर नहीं है। शिक्षा वही है जो 'आत्मनिर्भर' हो।' दरअसल गांधी बहुत दूर की सोच रहे थे।

नई तालीम की योजना में गांधी 'शिक्षा के साहित्यिक पहलू की तुलना में उसके सांस्कृतिक पहलू को कहीं अधिक महत्व देते हैं।' संस्कृति से उनका तात्पर्य है समग्र जीवन दर्शन जिसमें रसबोध, शीलबोध और व्यवहार बोध से लेकर कला–शिल्प तक सबका समावेश है। वस्तुतः नई तालीम 'त्रिगुण' के माध्यम से मनुष्य के संपूर्ण विकास पर जोर देती है। यह त्रिगुण कुछ और नहीं अपितु 'व्यक्ति–चरित्र–कला' ही है जो किसी भी समाज के विकास के आवश्यक अंग होते हैं। नई तालीम अपनी योजना में समाज के सभी व्यक्तियों को बिना किसी भेद–भाव के चौदह वर्ष तक मुफ्त शिक्षा की वकालत करती है। इसमें स्त्रियों को भी शिक्षा प्राप्त करने का उतना ही अधिकार है जितना कि पुरूषों को। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए गांधी ने विद्यापीठों को गांव तक ले जाने की वकालत की। 'आदमी साक्षरता अथवा विद्वत्ता से आदमी नहीं बनता, बल्कि सच्चे जीवन के लिए ली गई शिक्षा से बनता है'। यह नई तालीम की दूसरी विशेषता है। सच्चा जीवन उसी का हो सकता है जिसका चरित्र भी उत्तम हो। गांधी चरित्र–निर्माण पर बहुत जोर देते थे। वे तो यह मानते थे कि सिर्फ अक्षर कला का ज्ञान किसी भी छात्र के नैतिक उन्नति अथवा चरित्र निर्माण में कोई योगदान नही दे सकता है जिसकी जरूरत उसके समाज को है। नई तालीम बच्चों के नैतिक उत्थान, सामाजिक समरसता और सांप्रदायिक सौहार्द को बढ़ावा देने का काम करेगी। जैसा कि ऊपर हमने देखा है कि नई तालीम शिल्प केंद्रित होती है। यह पढ़ाई के साथ–साथ

कौशल विकास पर भी ध्यान देती है। शिक्षा और कौशल विकास में अन्योन्याश्रित संबंध है। वे कहते हैं, मेरी धारणा है कि बुद्धि की सच्ची शिक्षा केवल हाथ, पैर, नेत्र, कान, नाक आदि शारीरिक अंगों के उचित व्यायाम एवं प्रशिक्षण से ही प्राप्त की जा सकती है।

वह कहते हैं कि शिक्षा से मैं यह अर्थ लेता हूँ कि वह बच्चे और मनुष्य की काया, बुद्धि और आत्मा में जो कुछ श्रेष्ठ है, उसे समग्र रूप से उभार दे। साक्षरता अपने आप में शिक्षा नहीं होती। इसलिए मैं बच्चे की शिक्षा का आरंभ उसे किसी उपयोगी दस्तकारी को सिखाकर करूंगा और यह कोशिश करूंगा कि वह प्रशिक्षण आरंभ होते ही कोई न कोई चीज बनाने लगे। मेरी धारणा है कि शिक्षा की ऐसी प्रणाली के अंतर्गत बुद्धि और आत्मा का अधिकतम विकास किया जा सकता है। जैसा कि हम जानते हैं कि गांधी केवल सत्तही ज्ञान अथवा सुनी सुनाई बातों के आधार पर कोई बात नहीं कहते हैं। उनके हर वाक्य–विचार के पीछे सुदीर्घ निरीक्षण–परीक्षण होता है। उन्होंने अपने आश्रमों में शिक्षा के साथ कला–शिल्प को जोड़ा था और उसके अच्छे परिणाम भी आए थे।

गांधी के मन में गाँव के प्रति अद्‌भुत राग है। वे अपना हर क्षण गाँव में ही बिताना चाहते हैं। उनके द्वारा स्थापित आश्रम इसके प्रमाण हैं। गाँव उनके लिए सत्य, अहिंसा, सादगी, निष्कपटता, श्रम का प्रतीक है। वे जोर देकर कहते हैं, कि अगर गाँव नष्ट होते हैं तो भारत भी नष्ट हो जाएगा। वे गाँवों को आत्मनिर्भर बनाने पर बल देते हैं। गाँव अपनी आवश्यकता की प्रत्येक वस्तु का स्वयं निर्माण करे। वे चाहते हैं कि ग्रामवासियों को अपने कला–कौशल में इतनी महारत हासिल कर लेना चाहिए कि उनके द्वारा तैयार की गई चीजें गाँव से बाहर निकलते ही हाथों–हाथ बिक जाय। इसलिए वे कहते हैं कि – 'मेरी योजना में प्राथमिक शिक्षा ग्रामोद्योग के माध्यम से दी जानी चाहिए।' गांधी भारत की गरीबी से बखूबी परिचित हैं। तभी तो कवीन्द्र के एक पत्र में जवाब देते हुए लिखते हैं – 'भारत एक घर है जिसमें आग लगी हुई है, क्योंकि इसे दिन पर दिन पुंसत्वहीन बनाया जा रहा है, यह भूख से मर रहा है, क्योंकि इसके पास काम नहीं जिससे यह अपनी रोटी कमाये। दरअसल गांधी ने गांवों में देखा था कि वहाँ 'स्वस्थ' संस्कारों के बीज (भी) अशिक्षित मन और उंगुलियों में इधर–उधर बिखरे पड़े हैं और वे अपने आप उगकर क्रमहीन झाड़–झंखाड़ का रूप लेते हैं'। उनका मानना था कि नई तालीम के माध्यम से यदि 'थोड़ी सी चेष्टा की जाय तो इन्ही उंगुलियों द्वारा

लोक–शिल्प की' 'सुजलाम–सफलाम' वाटिकाएं प्रत्येक जनपद में तैयार हो जाएंगी, प्रत्येक जनपद में लोक–शिल्प के श्रीनिकेत तैयार हो जाएँगे।

नई तालीम के तहत व्यावसायिक शिक्षा के साथ–साथ गणित और विज्ञान की शिक्षा पर भी जोर देने की बात की गई है। इसके साथ ही इसमें साहित्य और संगीत का भी समावेश है। संगीत अनुशासन का पर्याय है। गांधी का मानना है कि 'मनुष्य न केवल बुद्धि है, न निपट पाशविक शरीर और न केवल हृदय अथवा आत्मा। समग्र मानव इन तीनों के उचित और सामंजस्यपूर्ण योग से ही बनता है और शिक्षा की सच्ची योजना में इसी का समावेश होना चाहिए।' स्पष्ट है कि नई तालीम मनुष्य के संपूर्ण विकास पर जोर देती है न कि एकांगी विकास पर। लेकिन यह विकास अपने लक्ष्य की पूर्ति तभी कर सकता है जब उसे वह शिक्षा मातृभाषा में दी जाय। विश्व के बड़े से बड़े शिक्षाविदों ने प्राथमिक शिक्षा के लिए मातृभाषा की वकालत की है। गांधी ने तो मातृभाषा की तुलना माँ के दूध से की है – 'मातृभाषा मनुष्य के मानसिक विकास के लिए उसी प्रकार स्वाभाविक है जिस प्रकार माँ का दूध शिशु के शरीर के विकास के लिए है।' इसके लिए वे इंतजार करने के पक्ष में नहीं हैं। उनका कहना है कि 'शिक्षा का माध्यम तत्काल बदल देना चाहिए और प्रांतीय भाषाओं को हर कीमत पर उनका उचित स्थान दिया जाना चाहिए।' दरअसल मातृभाषा में दी जाने वाली शिक्षा आसपास के लोगों से घुलने–मिलने का अवसर देती है। वर्तमान समय में जीवन में बिलगाव और बेगानगी बढ़ता जा रहा है। इस आपाधापी में बच्चे अपना बचपन खोते जा रहे हैं। ऐसे में स्कूल के माध्यम से ही हम सामाजिक एकता के पाठ को विद्यार्थियों को पढ़ा सकते हैं।

देश के बौद्धिक वर्ग के नकल करने की प्रवृति पर गांधी की चिंता को कुबेरनाथ राय रेखांकित करते हुए लिखते हैं – 'एकेडेमिक क्षेत्र में देशज चिंतन छूटता गया, पश्चिमी विचार और प्रणालियाँ विचार जगत पर छा गयीं। यह भी बौद्धिक उपनिवेशवाद की स्वीकृति है जिसके लिए कुछ प्रलोभन तो थे, पर विशेष दवाब और आग्रह नहीं था। साहित्य और कला पर पश्चिमी प्रभाव स्पष्ट था। अपनी जड़ों से कटा हुआ बौद्धिक वर्ग अनुकरण को ही उत्सवधर्मी बना रहा था'। अपनी प्रसिद्ध कृति 'हिन्द–स्वराज' में गांधी ने स्पष्ट शब्दों में कहा है – 'मैकाले ने भारत में जिस शिक्षा–पद्धति का आधार रखा है, उसने हमको गुलाम बना दिया है।' हम यह समझने लगे हैं कि 'अँग्रेजी जाने बगैर कोई 'बॉस' नहीं बन सकता। इससे बड़े अंधविश्वास की बात और कोई नहीं हो सकती''। कला–साहित्य से लेकर दैनंदिन

कार्यों तक में हमने पश्चिम की नकल करनी शुरू कर दी। फलस्वरूप हम अपने लोगों से दूर होते गए। अपने ही समाज का एक बड़ा हिस्सा इस नकल के चलते 'प्रस्तर–कुटी' का निवासी बन कठोर यंत्रणा में जीने को मजबूर हो गया। सच तो यह है कि शिक्षा का एक बड़ा उद्देश्य होता है – मनुष्य बनना। हम इसके माध्यम से अपना परिष्कार करते हैं। इसीलिए गांधी ने नई तालीम में 'स्वदेशी और अहिंसा' की वकालत की। 'अनुभव वही सबसे मूल्यवान होता है और देश की समृद्धि में र्स्वाधिक योगदान करता है जो अपनी धरती से पैदा हुआ हो।' जब तक हम अपने परिवेश से वाकिफ न हों हम देश क्या अपना भला भी नहीं कर सकते हैं। विपत्ति कभी अकेले नहीं आती है। गांधी इस बात को ठीक से समझते हैं। इसलिए वे अहिंसा को जीवन–पद्धति के शास्त्र के रूप में देखते हैं। इसका समाज को लाभ भी है। 'अहिंसा की प्रकृति ही ऐसी है कि वह शाक्ति को छीन' नहीं सकती, न यह उसका लक्ष्य हो सकता हैं। लेकिन अहिंसा उससे भी बड़ा काम कर सकती है, वह सरकारी तंत्र को हस्तगत किए बिना शक्ति को प्रभावी ढ़ंग से नियंत्रित और निर्देशित कर सकती है। यही उसकी खूबी है।' समाज में भाईचारा और एकता का इससे बड़ा माध्यम और क्या हो सकता है।

अध्यापक प्रशिक्षण कार्यक्रम के अपने एक उद्‌बोधन में वे कहते हैं – 'यहाँ तालीमी संघ में जो भी भवन हैं, वे स्थानीय कारीगरों के मदद से बने हैं। इस तरीके से हमने अपने और यहाँ के लोगों के साथ एक जीवंत सम्बंध कायम कर लिया है। यह चीज स्वयं में लोगों के लिये एक तरह की शिक्षा है, और हमारे भावी शिक्षा कार्य की बुनियादी है।' यहां हम देख सकते हैं कि गांधी पूरे स्थानीय समाज को एक छोटे से तालीमी भवन से जोड़ने की कोशिश करते हैं और उसमें सफल भी होते हैं। पर वे यहीं नहीं रूकते हैं। वे कहते हैं कि 'शिक्षा में मन और शरीर की सफाई ही शिक्षा का पहल कदम है। आपके आसपास की जगह की सफाई जिस प्रकार झाड़ू और बाल्टी की मदद से होती है, उसी प्रकार मन की शुद्धि प्रार्थना से होती है।' चूंकि संसार के सभी फसादों में 'मन' (मस्तिक) की ही महत्वपूर्ण भूमिका होती है। इसीलिए वे मन की सफाई पर विशेष जोर देते हैं। इसके लिए सबसे सरल उपाय भी बताते हैं – 'ईश्वर के असंख्य नाम हैं लेकिन मेरी राय में सबसे सुंदर और उपयुक्त नाम सत्य है।' इसे ही पतंजलि ने 'ईश्वर प्रणिधानानि' कहा है। वे आगे बढ़कर मनुष्य को उसकी सीमा का भी भान कराते हैं, 'जो बात व्यक्ति पर लागू होती है वही समाज पर लागू होती है। गांव का मतलब है व्यक्तियों का एक समुदाय, और मेरी नजर में यह विश्व एक विशाल गांव तथा सारी मानव–जाति

एक कुटुम्ब है।' तदुपरान्त वे अपने साध्य अर्थात अहिंसक समाज की निर्मिति की ओर संकेत करते हुए कहते हैं कि 'इस विराट जगत में मात्र प्राणी के रूप में मनुष्य का स्थान बहुत नगण्य है। शारीरिक दृष्टि से वह बहुत तुच्छ कीड़ा है। लेकिन ईश्वर ने उसे बुद्धि और अच्छे बुरे का भेद करने की क्षमता दी हैं। यदि हम क्षमता का उपयोग ईश्वर को जानने के लिये करें तो हम भलाई करनेवाली ताकत बन जायेंगे। इसी क्षमता का दुरूपयोग हमें बुराई का साधन बना देता है और हम महामारी की तरह धरती पर लड़ाई, खून–खराब, दुःख और कष्ट फैला देते हैं।' कहना न होगा कि गांधी ने नई तालीम के माध्यम से हमारे सामने एक अहिंसक समाज की मुकम्मल तस्वीर पेश की है। यदि हम उनके द्वारा सुझाए गए रास्तों या उपायों के संदेश को पकड़ने में सफल होते हैं तो अब भी देर नहीं हुई है। अन्यथा आने वाली पीढ़ी शायद ही हमें माफ करे।

संदर्भ

1. गांधी वागंमय, खंड – 48, पृष्ठ 220।
2. हरिजन, 10 मार्च 1946।
3. प्रभू एवं राव, महात्मा गांधी के विचार, पृष्ठ 5।
4. प्रभू एवं राव, महात्मा गांधी के विचार, पृष्ठ 137।
5. सुधीन्द्र कुलकर्णी, म्यूजिक आफ द स्पीनिंग ह्वील, पृष्ठ137।
6. प्रभू एवं राव, महात्मा गांधी के विचार, पृष्ठ 362।
7. प्रभू एवं राव, महात्मा गांधी के विचार पृष्ठ 366।
8. प्रभू एवं राव, महात्मा गांधी के विचार, पृष्ठ 365।
9. प्रभू एवं राव, महात्मा गांधी के विचार, पृष्ठ 363।
10. प्रभू एवं राव, महात्मा गांधी के विचार, पृष्ठ 365।
11. यंग इंडिया, 30 अप्रैल 1941।
12. हरिजन, 9 अक्तूबर 1937।
13. यंग इंडिया, 13 अक्तूबर 1921।
14. कुबेरनाथ राय, निपाद बांसुरी, पृष्ठ 96।
15. प्रभू एवं राव, महात्मा गांधी के विचार, पृष्ठ 365।
16. प्रभू एवं राव, महात्मा गांधी के विचार, पृष्ठ 368।
17. प्रभू एवं राव, महात्मा गांधी के विचार, पृष्ठ 368।
18. कुबेरनाथ राय, चिन्मय भारत, पृष्ठ 368।
19. सुधीन्द्र कुलकर्णी, म्यूजिक आव द स्पीनिंग ह्वील, पृष्ठ 140।
20. प्रभू एवं राव, महात्मा गांधी के विचार, पृष्ठ 368।
21. प्रभू एव राव, महात्मा गांधी के विचार, पृष्ठ 367।
22. प्रभू एव राव, महात्मा गांधी के विचार, पृष्ठ 124।
23. हरिजन, 19 नवम्बर 1944।

भारतीय विचारक श्री अरविन्द घोष का शिक्षा में योगदान : एक अध्ययन

विभा तिवारी

श्री अरविन्द का जन्म 15 अगस्त 1872 ई. में कलकत्ता (वर्तमान कोलकाता) के घोष परिवार में हुआ था। उनके पिता डा. कृष्णधन घोष कलकत्ता के प्रसिद्ध सिविल सर्जन थे और माता का नाम स्वर्णलता देवी था। सन् 1879 में इन्हें शिक्षा प्राप्ति हेतु इंग्लैण्ड भेज दिया गया। वहाँ पर इन्होंने लैटिन भाषा का भी अध्ययन किया। सन् 1890 में वे कैम्ब्रिज के किंग्स कॉलेज में भरती हुए। उन्होंने आई.सी. एस. की परीक्षा में सफलता प्राप्त करते हुए ग्यारवीं स्थान प्राप्त किया। कैम्ब्रिज में ट्राईपॉस का प्रथमभाग प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण किया। इनका विवाह सन् 1901 में मृणालिनी नामक कन्या से हुआ परन्तु मृणालिनी का देहान्त 1918 में हो गया। श्री घोष ने 1905 से 1910 तक सक्रिय राजनीति में भाग लिया। उन्होने एक वर्ष का कारावास भी झेला। सन् 1903 में उनकी भेंट श्री ब्रहमानन्द से हो चुकी थी जो अध्यात्मिक साधना के मार्ग में धीरे धीरे बढ़ते रहे। 1960 मे उनकी भेंट विष्णु भास्कर लेले नामक एक मराठा योगी से हुई। अपना सारा राजनैतिक कार्य स्थगित करके श्री अरविन्द ने तीन दिनों तक विष्णु भास्कर लेले के साथ गहन साधना की। इस साधना से उन्हें कुछ आध्यात्मिक अनुभव हुए। बाद के उनके कार्यो, विचारों एवं भाषणों पर इस आध्यात्मिकता की छाप दृष्टिगोचर होती है।

पॉण्डिचेरी में सन् 1910 से 1917 तक उन्होनें गुप्त साधाना की। 1914 में उन्होनें 'आर्य' नामक मासिक पत्रिका का प्रकाशन आरंभ किया। पण्डिचेरी में श्री अरविन्द के साथ अनेक साधक रहने लगे और 1926 में अरविन्द आश्रम की स्थापना हो गई।

श्री अरविन्द के साथ उनके सभी साथी–साधक वहां पर लोक साधना में लीन हो गए। कहा जाता है कि इस साधना के फलस्वरूप उन्हें 24 नवम्बर 1936 को परमशक्ति के दर्शन हुए। श्री अरविन्द ने अपना शेष जीवन इसी आश्रम में रहते हुए आध्यात्मिक साधना एवं योग में व्यतीत किया। इस प्रकार श्री अरविन्द राजनीतिक कार्यकर्ता से एक दार्शनिक बन गये और दार्शनिक के रूप में उन्होंने जनता के सामने शिक्षा, धर्म, योग तथा ब्रहमचर्य आदि विषयों पर अपने विचार प्रस्तुत किये।

इस महान ऋषि, साधक तथा शिक्षाशास्त्री ने 5 दिसम्बर 1950 में अपना शरीर त्याग दिया।

जीवन दर्शन : श्री अरविन्द एक आदर्शवादी व्यक्ति थे। उनके दर्शन का आधार उपनिषद का वेदान्त था। वे जीवन में आध्यात्मिक साधना, योग तथा ब्रहम्चर्य को विशेष महत्व देते हुए विकास के सिद्धांत में विश्वास करते थे। वे उपनिषदों के भाष्यकार नहीं थे, बल्कि स्वंय उपनिषदिक सत्य के द्रष्टा थे। उनके द्वारा रचित महान ग्रन्थ "लाईफ डिवाइन" सत्य के साक्षात्कार का वर्णन है।

श्री अरविन्द के अनुसार ब्रहम संसार में है और संसार से परे भी है। उनके अनुसार जिसे दर्शन में ब्रहम कहा जाता है उसे ही धर्म में ईश्वर कहना चाहिए। ईश्वर स्रष्टा, पालनकर्ता और संहारक है। ईश्वर सृष्टि का सार, पूर्ण, मुक्त, सनातन और सर्वात्मा है। वह परमपुरूष है और ब्रहम निरपेक्ष सत्ता है। किन्तु अन्ततः दोनों एक ही हो जाते हैं। ईश्वर प्रकट है ब्रहम अप्रकट है। उन्होंने बताया कि विकास का लक्ष्य केवल एक ही है और वह है संसार में व्यापक दिव्य शक्ति अथवा पूर्ण एवं अखण्ड चेतना को प्राप्त करना। श्री अरविन्द का विश्वास था कि विकास का यह क्रम निरन्तर चलता ही रहता है। इस विकासक्रम की एक ऐसी स्थिति भी आती है। जब मानव अति मानसिक स्तर को प्राप्त करके स्वयं अतिमानव बन जाता है। इस स्तर पर पहुँचकर मानव ज्ञान से अधिक ज्ञान तथा प्रकाश से अधिक प्रकाश की ओर बढ़ता है। इससे उसे आश्चर्यजनक शान्ति एवं वास्तविक सुख का आनन्द प्राप्त होते हुए सृष्टि के रहस्य तथा व्याप्त सत्यता का पूर्ण ज्ञान हो जाता है।

शिक्षा दर्शन : श्री अरविन्द का शिक्षादर्शन आध्यात्मिक साधना, ब्रहमचर्य तथा योग पर आधारित है। उनका विश्वास था कि इस प्रकार की शिक्षा से ही मानव का पूर्ण विकास किया जा सकता है। उन्होंने स्वंय लिखा है कि " सच्ची और वास्तविक शिक्षा वह है जो मानव की अन्तर्निहित समस्त शक्तियों को इस प्रकार विकसित करती है कि वह उनसे पूर्ण रुप से लाभान्वित होता है (That alone would a true and living education which helps to bring out to full advantage all that is in the individual man).

श्री अरविन्द ने अपने शिक्षा सम्बंधी विचारों को अपने सप्ताहिक 'कर्मयोगिन में प्रकाशित किया तथा बताया कि शिक्षक का प्रमुख उपकरण अन्तःरण होता है। इस अन्तःकरण के चार पटल अथवा स्तर होते हैं चित्त, मानस, बुद्धि तथा ज्ञान। शिक्षा को बालक के इन चारों स्तरों का अधिक से अधिक विकास करना चाहिए। आदर्शवादी होने के नाते श्री अरविन्द का शिक्षादर्शन, आध्यात्मिक साधना, ब्रहमचर्य

तथा योग पर आधारित है। उनका विश्वास था कि जिस शिक्षा में उक्त तीनों तत्व सम्लित होंगे उससे मानव का पूर्ण विकास होना निश्चित है। उनके अनुसार मानव में केवल शरीरिक आत्मा ही नहीं होती अपितु उसका बौद्धिक, मानसिक, और ब्रहम सम्बन्धी, विशेष आध्यात्मिक अस्तित्व भी होता है। यही नहीं, उसमें ईश्वर को पहचानने की शक्ति भी होती हैं पर ईश्वर को पहचानने के लिए उसे स्वार्थपरता से ऊपर उठना चाहिए, जो सरल कार्य नहीं है। इस महान उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए उसकी चिंतन तथा दैवी शक्तियों को विकसित करना परम आवश्यक है। उनके अनुसार सच्ची शिक्षा वह शिक्षा है जो बालक के सामने स्वतंत्र वातावरण प्रस्तुत करने तथा उसकी रूचियों के अनुसार उसकी क्रियात्मक, बौद्धिक, नैतिक तथा सौदर्यात्मक शक्तियों को विकसित करके उसके आध्यात्मिक विकास में सहायता प्रदान करें।

शिक्षा दर्शन के आधार भूत सिद्धान्त :– श्री अरविन्द की शिक्षा के आधारभूत सिद्धांत निम्नलिखित हैं –

(1) शिक्षा सदैव मातृभाषा पर आधारित तथा बालकेन्द्रित होना चाहिए।
(2) शिक्षा बालक की मनोवृत्तियों तथा मनोवैज्ञानिक परिस्थितियों के अनुसार होना चाहिए।
(3) शिक्षा को बालक में छिपी हुई शक्तियों का विकास करना चाहिये।
(4) शिक्षा को बालकों की शारीरिक शुद्धि करनी चाहिए।
(5) शिक्षा के द्वारा बालकों के अन्तःकरण व चेतना का विकास करना चाहिये।
(6) शिक्षा को ज्ञानेन्द्रियों को प्रकाशित करना चाहिये।
(7) ब्रहमचर्य को शिक्षा का आधार बनाना चाहिये।
(8) शिक्षा के विषय रोचक होने चाहिये।
(9) शिक्षा रोचक विषयों द्वारा प्रदान करना चाहिये।
(10) शिक्षा में दार्शनिक पुट अवश्यक देना चाहिए।
(11) शिक्षा द्वारा मानवीय शक्तियाँ विकसित करके उन्हें पूर्ण मानव बनाना चाहिये।

शिक्षा के उद्देश्य

(1) बालकों की शारीरिक शुद्धि करना और उसके शरीर का पूर्ण विकास करना।
(2) बालकों के अंतःकरण का विकास करना।
(3) बालकों की ज्ञानेन्द्रियों का विकास करना।

(4) बालक को तथ्य संग्रह करने और निष्कर्ष निकालने का प्रशिक्षण देकर उनकी तर्कशक्ति का विकास करना।

(5) बालक की वैयक्तिक व प्रच्छन शक्ति (Individuality & Potentiality) को पूर्णता की ओर अग्रसर करके उसका आध्यात्मिक विकास करना।

(6) बालक की प्रकृति आदतों व भावनाओं को शुद्ध व सुन्दर बनाकर उसके ह्दय का परिवर्तन करना व उसकी नैतिकता का विकास करना।

(7) बालक की अभिरूचियों के अनुसार उसकी स्मृति, कल्पना, चिंतन व निर्णय शक्ति का विकास करके उनकी मानसिक शक्ति का विकास करना।

पाठ्यक्रम : श्री अरविन्द ने बालक की समस्त शक्तियों को विकसित करने के लिए स्वतंत्र वातावरण का समर्थन किया तथा पाठ्यक्रम में बालकों की रूचियों के अनुसार उन सभी विषयों को सम्मिलित करने का सुझाव प्रस्तुत किया जिनमें शैक्षिक अभिव्यक्ति तथा क्रियाशीलता के गुण विद्यमान हों। वास्तविकता यह है कि श्री अरविन्द प्रत्येक विषय में जीवन का नया संचार करके उसे एक नया रूप देते हुऐ इतना विकसित करना चाहते थे कि उसके द्वारा श्रेष्ठ मानवता का विकास हो सके। अतः उन्होंने पाठ्यक्रम निर्माण हेतु निम्नलिखित सिद्धांत प्रस्तुत किये हैं –

1. पाठ्यक्रम रोचक हों।
2. पाठ्यक्रम में उन सभी विषयों को स्थान दिया जाए जिनमें बौद्धिक तथा अध्यात्मिक विकास हो।
3. पाठ्यक्रम के विषयों में बालक को आकर्षित करने की शक्ति हो।
4. पाठ्यक्रम के विषयों में जीवन की क्रियाशीलता के गुण होने चाहिए।
5. पाठ्यक्रम को विश्वज्ञान में बालक की रूचि उत्पन्न करनी चाहिये।

उपर्युक्त सिद्धांतो के आधार पर श्री अरविन्द ने बालक के पूर्ण विकास हेतु शिक्षा के विभिन्न स्तरों पर पाठ्यक्रम के अर्न्तगत निम्नलिखित विषयों को सम्मिलित किया।

1. प्राथमिक स्तर – मातृभाषा, अंग्रेजी, फ्रैंच, साहित्य, राष्ट्रीय इतिहास, चित्रकला, सामान्य विज्ञान, सामाजिक अध्ययन।

2. माध्यमिक स्तर – मातृभाषा, अंग्रेजी, फ्रैंच, गणित, कला, रसायन, विज्ञान वनस्पति, विज्ञान स्वास्थ, शरीर विज्ञान, तथा सामाजिक विषय।

3. विश्वविद्यालय स्तर – भारत तथा पाश्चात्यदर्शन, सभ्यता का इतिहास, अंग्रेजी साहित्य, फ्रैंच साहित्य, सामाजशास्त्र, मनोविज्ञान का इतिहास, गणित, रसायन शास्त्र, भौतिक शास्त्र, जीवविज्ञान, विश्वएकीकरण, तथा अन्तर्राष्ट्रीय सम्बंध।

4. व्यावसायिक शिक्षा – चित्रकारी, फोटोग्राफी, सिलाई, सूची शिल्प कार्य, शिल्पकला सम्बंधी ड्रांइग, टंकन, आशुलिपि (Short Hand), कुटीरउद्योग, काष्ठ कला, सामान्य मैकेनिकल एवं इलैक्ट्रीकल इंजीनियरिंग, उपचारण (Nursing), भारतीय तथा यूरोपीय संगीत, अभिनय तथा नृत्य।

शिक्षण–पद्धति (Methods Of Teaching) : श्री अरविन्द का मानना था कि बालक के सामने स्वतंत्रता का वातावरण प्रस्तुत करना चाहिये जिसे वह अधिक से अधिक ज्ञान प्राप्त कर सके। उनका विश्वास था कि नियंत्रित वातावरण में विकास कुठित हो जाता है जिससे अरविन्द के अनुसार बालक के साथ प्रेम और सहानुभूति का व्यवहार करना चाहिये जिससे स्वभाविक रूप से विकसित होता रहता है। उन्होंने बताया कि बालक को उसकी मातृभाषा में शिक्षा मिलनी चाहिये। इसे वह कठिन विषयों को भी आसानी से समझ सकता है। उनके विचार से शिक्षक को चाहिये कि वह बालक की रूचियों का अध्ययन करे तथा उनके अनुसार उसकी शिक्षाव्यवस्था करें। ऐसा करने से बालक में शिक्षा के प्रति रूचि को बढ़ावा मिलेगा, अन्यथा वह पढ़ना छोड़ देगा। साथ ही वे यह भी कहते थे कि बालक को स्वंय प्रयत्न करना तथा स्वानुभव द्वारा सीखने के अधिक से अधिक अवसर प्रदान किये जाए। इस प्रकार सीखा गया ज्ञान बालक की व्यक्तित्व का स्थायी अंग बन जाता है। ऐसी शिक्षा वास्तविक व लाभप्रद होती है। श्री अरविन्द ने बालक की क्रियाओं को महत्वपूर्ण स्थान दिया तथा बताया कि बालक को स्वंय करके सीखने के अवसर मिलना चाहिये। इसलिए उन्होंने शिशु कक्षा में मान्टसरी प्रणाली तथा प्राथमिक माध्यमिक कक्षाओं में चित्रकला को महत्वपूर्ण स्थान दिया। उनका विश्वास था कि पढनें व सीखने का कार्य परस्पर सहयोग के द्वारा ही सफल हो सकता है। अतः उन्होने इस बात पर बल दिया कि पाठ को पढाते समय शिक्षक बालक का अधिक से अधिक सहयोग प्राप्त करें। वे मानते थे कि प्रत्येक बालक में कुछ ईश्वरीय देन होती है तथा कुछ उसकी प्रतिभा भी। उसकी आत्मा को सर्वोत्तम रुप से विकसित करने के लिए उसे उसकी प्रकृति के अनुसार विकसित होने के अवसर मिलने चाहिए।

शिक्षक का स्थान : श्री अरविन्द के अनुसार प्रत्येक बालक में व्यक्तिगत क्षमताएं तथा विलक्षणतायें होती हैं। इस ईश्वरीय देन को पूर्णरूपेण विकसित करना ही उसकी सच्ची शिक्षा है। उन्होंने शिक्षा में शिक्षक को निर्देशक, सहायक व पथ प्रदर्शक का स्थान दिया है। वह मौन रूप से बालकों की अभिरूचियों का अध्ययन करके उन अभिरूचियों के अनुरुप बालकों के लिये शिक्षा सामग्री का प्रस्तुतीकरण करे अर्थात शिक्षक को यह प्रयत्न करना चाहिय कि बालक अपनी अभिरूचियों के अनुसार ज्ञान का अर्जन करते हुए स्वशिक्षा (Self Education) के पथ पर अग्रसर हों। अतः श्री घोष ने अध्यापक को गौण स्थान प्रदान किया है। श्री अरविन्द का कथन है कि अध्यापक अनुदेशक (Instructor) या स्वामी नहीं, वह सहायक और पथप्रदर्शक है, उसका कार्य सुझाव देना है, न कि ज्ञान को लादना। वह वास्तव में छात्र के मस्तिष्क को प्रशिक्षित नहीं करता है। वह छात्र को केवल यह बताता है कि वह अपने ज्ञान के साधनों को किस प्रकार समृद्ध बनाये। वह छात्र को सीखने की प्रक्रिया में सहायता व प्रेरणा देता है। वह छात्र को ज्ञान नहीं देता है। वह उसे यह बताता है वह अपने आप किस प्रकार ज्ञान प्राप्त करें। वह बालक के अन्दर निहित ज्ञान को बाहर नहीं निकालता है। वह उसे केवल यह बताता है कि ज्ञान कहॉ है और उसको बाहर लाने के लिए किस प्रकार अभ्यास किया जा सकता है।

बालक का स्थान : श्री अरविन्द ने बालक को शिक्षा में प्रमुख स्थान दिया है। उनके विचार के अनुसार बालक का विकास उसकी प्रकृति, अभिरूचि, स्वभाव, तथा धर्म के अनुकूल ही किया जाना चाहिए। वह शिक्षा बालक हेतु निरर्थक है, जो पूर्व निर्धारित गुणों, आदर्शों तथा विशेषताओं के अनुसार आयोजित की जाती है। क्योंकि, प्रत्येक बालक में क्षमतायें होती हैं तथा इन क्षमताओं की यदि अवहेलना करें तो यह बालकों के प्रति अन्यायपूर्ण कार्य होता है। उन्होंने बताया कि शिक्षा की व्यवस्था उसकी प्रकृति को ध्यान में रखते हुए, उसकी जिज्ञासा, योग्यता, रूचियों के अनुसार दी जानी चाहिए जिससे उसके व्यक्तित्व का पूर्ण विकास हो जाए। इस संबंध में श्री अरविन्द घोष स्वंय लिखते हैं 'बालक को मातापिता तथा शिक्षक की इच्छानुसार ढालना अंधविश्वास तथा जंगलीपन है। मातापिता इससे बड़ी भूल और कोई नहीं कर सकते कि वे पहले से ही इस बात की व्यवस्था करें कि उनके पुत्र में विशिष्ट गुणों, क्षमताओं व विचारों का विकास होगा। प्रकृति को स्वंय अपने धर्म का त्याग करने के लिए बाध्य करना उसे स्थाई

हानि पहुँचाना है, उसके, विकास को व्युत्कृत करना है, तथा उसकी पूर्णता को दूषित करना है।^ श्री अरविन्द घोष ने प्रशिक्षण देने में इन्द्रिय प्रशिक्षण पर बल दिया है। यह अवश्य है कि उन्होंने इन्द्रिय प्रशिक्षण के साथ–साथ मानसिक प्रशिक्षण पर भी बल दिया है।

इन्द्रियों का प्रशिक्षण : अरविन्द के अनुसार बालक की शिक्षा का प्रारम्भ ऑख, कान, नाक, जीभ, और त्वचा के प्रशिक्षण से होना चाहिए क्योंकि अनुभव की यथार्थतता का आधार यही प्रशिक्षण है। यदि इन इन्द्रियों में कोई शारीरिक विकृति है तो उसका तत्काल उपचार करना चाहिए। ज्ञानेन्द्रियों में यदि कोई अपूर्णता है तो उस अपूर्णता के कारण को समझना चाहिए। ज्ञानेन्द्रियों को सबल बनाना चाहिए। उन्हें सचेष्ट और सशक्त बनाने के लिए नाड़ियों का सशक्त होना आवश्यक है। ज्ञानतन्तुओं के कार्य में कोई बाधा नहीं आनी चाहिए। यदि नाड़ियों के कार्य में कोई ऐसी बाधा है जिसे वैद्य दूर नहीं कर सकते तो उन बाधाओं को 'नाडी' शुद्धि द्वारा शुद्ध किया जाना चाहिए। नाड़ी शुद्धि में श्वास क्रिया को योगिक अनुशासन के द्वारा नियमित किया जाता है।

ज्ञानेन्द्रियों के प्रयोग का अधिकाधिक अभ्यास होना चाहिए। किसी वस्तु को समझने में ज्ञानेन्द्रियों की योग्यता सहायक होती है। अतः ज्ञानेन्द्रियों के प्रशिक्षण के लिए विभिन्न प्रकार की परिस्थितियों में बालकों को रखकर उनकी इन्द्रियों के समुचित प्रयोग को प्रोत्साहित करना चाहिए। हमारी इन्द्रियाँ कभी कभी ठीक प्रकार से कार्य नहीं कर पाती हैं। इसके तीन कारण हैं। स्नायविक व संवेगात्मक प्रवाह इसका पहला चरण है। अतः संवेगों को अनुशासित करना चाहिये और नैतिक आदतों का विकास करना चाहिए। दूसरा कारण मानसिक है जिसके लिए मानसिक प्रशिक्षण आवश्यक है। तीसरा कारण विगत साहचर्य एवं स्मृति है जिसके लिये चित्तशुद्धि एवं चित्तशान्ति आवश्यक है।

मानसिक प्रशिक्षण : इन्द्रिय प्रशिक्षण के साथ–साथ मानसिक शक्तियों के प्रशिक्षण पर श्री अरविन्द बल देते हैं। मानसिक शक्तियों के प्रशिक्षण में अवधान या ध्यान को केन्द्रित करना अत्यन्त महत्वपूर्ण है। ध्यान को केन्द्रित करने से पहले एक वस्तु पर एक समय में ध्यान करने का अभ्यास किया जा सकता है। किन्तु यही लक्ष्य नहीं है। 'अवधान' को बहुमुखी होना है और कालान्तर में एक समय में अनेक वस्तुओं पर एक साथ ध्यान देने की योग्यता का विकास करना है। यह कार्य अभ्यास पर निर्भर है। अतः छात्रों को ध्यान केन्द्रित करने का प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए। ध्यान के साथ–साथ बालक के निरीक्षण करने की शक्ति का

भी विकास करना चाहिए। मानसिक प्रशिक्षण में कल्पना शक्ति के विकास पर भी बल देना है। मानसिक शक्तियों के प्रशिक्षण में एक अन्य प्रशिक्षण भी आवश्यक है और वह है बालक की तार्किक शक्तियों का प्रशिक्षण। तथ्यों के अनुशीलन द्वारा निष्कर्ष निकालने की ट्रेनिंग छात्रों को अवश्यक मिलनी चाहिए।

उपर्युक्त सभी प्रकार की मानसिक शक्तियों के प्रशिक्षण के लिए श्री अरविन्द ने ब्रहमचर्य को महत्वपूर्ण माना है। भारतीय विचारधारा में ब्रहमचर्य को आध्यात्मिक जीवन के लिए महत्वपूर्ण माना गया है। श्री अरविन्द ब्रहमचर्य के समर्थक हैं। आत्मा एवं सच्चे ज्ञान को अशुद्ध जीवन से नहीं प्राप्त किया जा सकता है। इसके लिए अंदर एवं बाहर पवित्रता आवश्यक है। मस्तिष्क, हृदय, इन्द्रिय एवं विचारों की शुद्धता से व्यक्ति आध्यात्मिक जगत में प्रवेश करता है। अतः ब्रहमचर्य द्धारा सर्वागींण शुद्धता का जीवन पर्यन्त अभ्यास आध्यात्मिकता के मार्ग पर चलने के लिए आवश्यक है। ब्रहमचर्य के समर्थन में श्री अरविन्द अन्य भारतीय आचार्यो के समान विचार रखते हुये दिखाई पड़ते हैं।

अरविन्द आश्रम

राजनीति का परित्याग करने के बाद सन् 1810 ई. में श्री अरविन्द ने पाण्डिचेरी में आश्रम की स्थापना की। अपने विचारों को मूर्त रूप देने के लिए इस आश्रम की स्थापना करते समय श्री अरविन्द ने इसे किसी विद्यालय का रूप नहीं दिया था। इसमें तो कुछ साधक एकत्र हो गये थे और वे आध्यात्मिक साधना में लीन थे। इसके सदस्यों की संख्या प्रारम्भ में बहुत कम थी जो धीरे–धीरे बढ़ती गई।

आश्रम में सदस्यों को किसी प्रकार की वेशभूषा पहनने के लिए बाध्य नहीं किया जाता है और न तो गेरूआ वस्त्र पर आग्रह है और न खादी कपड़े पर। आश्रम में जातिपॉति का भी बंधन नहीं है। किसी भी जाति, सम्प्रदाय व धर्म के लोग इसमें प्रविष्ट हो सकते हैं। देश ही नहीं, संसार भर से अनेक लोग इस आश्रम में रहने व सीखने के लिए आते हैं।

1920 में एक फ्रांसीसी महिला भी श्री अरविन्द के दर्शन की ओर आकृष्ट हुई। इनका नाम मीरा रिचार्ड था। इन्होंने आश्रम की सदस्यता स्वीकर की और बाद में आश्रम की व्यवस्था व संचालन में इनका भारी योगदान रहा। इन्हें माताजी के नाम से जाना जाता है। माताजी की लगन से आश्रम की प्रगति होती गई। आश्रम में आध्यात्मिक चिंतन पर बल दिया जाता है। आश्रमवासी मन, वचन और कर्म से अपने को पवित्र बनाने का प्रयास करते हैं। आश्रम का मुख्य उद्देश्य है मानवीय प्रेम का विकास करना। इसलिए यह संसार की समस्त संस्कृतियों का संगम है।

सन 1952 में ''श्री अरविन्द अर्न्राष्ट्रीय विश्वविद्यालय केन्द्र'' की स्थापना की गई। यह विश्वविद्यालय सन 1943 में श्री अरविन्द द्वारा स्थापित आश्रम–स्कूल का विकसित रूप है। जब अरविन्द आश्रम में साधकों की संख्या बढ़ने लगी तो सन् 1940 में ही साधकों को बच्चों को लाने अनुमति दे दी गयी। इन बच्चों को खेलने के लिए 1944 में मैदान भी दे दिया गया। इस स्कूल में पहले 32 छात्र थे। किन्तु अब संख्या 400 के आसपास है। इसी स्कूल का विकसित रूप विश्वविद्यालय केन्द्र है।

श्री अरविन्द विश्वविद्यालय केन्द्र में शिशु की शिक्षा से लेकर अनुसंधान कार्य तक का प्रबंध है। विश्वविद्यालय में दर्शन तथा अनेक भाषाओं के शिक्षण की सहशिक्षा है। विभिन्न देशों के छात्र यहां पढ़ने आते है। यह वास्तव में एक अन्तर्राष्ट्रीय संस्था है। इस समय लगभग 15 देशों के छात्र यहॉ पर शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं।

आश्रम में शारीरिक शिक्षा का भी प्रबंध है। साथ ही अपनी गौशाला भी है। आश्रम में आत्मनिर्भरता का दृश्य देखने को मिलता है, क्योंकि सभी कार्य जैसे गृहनिर्माण, बिजली, सफाई तथा मुद्रण कार्य भी यहां होता है। सभी व्यक्ति अपना अपना विभाग देखते हैं।

श्री अरविन्द का शिक्षा में योगदान : श्री अरविन्द द्वारा प्रतिपादित 'सर्वांग शिक्षा' सिद्धांतों पर यहॉ अनुसरण किया जाता है। आश्रम में किसी धर्म की शिक्षा का प्रबंधन नहीं है किन्तु सारा वातावरण आध्यात्मिकता से ओतप्रोत है और इस प्रकार सभी धर्मो के रहस्यों का प्रत्यक्ष साक्षात्कार हो जाता है। सम्पूर्ण शिक्षा निःशुल्क है और छात्र वर्तमान शिक्षा प्रणाली के अनेक दोषों से मुक्त हैं। श्री अरविन्द ने प्रकृतिवादियों एवं प्रयोजनवादियों की भॉति बालकेन्द्रित शिक्षा पर बल दिया। उनकी शिक्षा के उद्धेश्य आदर्शवादी दर्शन पर आधारित रहे। वस्तुस्थिति यह है कि श्री अरविन्द विशुद्ध आदर्शवादी थे। उनका शिक्षादर्शन आध्यात्मिक आस्था, ब्रहमचर्य तथा योग पर आधारित होते हुए आध्यात्मिकक प्रगति का परिचालक है। उन्होंने प्रचलित भौतिक शिक्षा की कड़ी आलोचना करते हुए बताया कि यह शिक्षा विदेशी है। भारत को ऐसी शिक्षा की आवश्यकता है जो भारतीयों के मस्तिष्क तथा आत्मा की शक्ति का निर्माण करें अथवा उसे जीवित कर उत्कर्ष के मार्ग पर अग्रसरित कर सके। इसी दृष्टिकोण से श्री अरविन्द ने अरविन्द आश्रम खोला जिसमें अन्तर्राष्ट्रीय विश्वविद्यालय की स्थापना की तथा नये सिद्धांतों पर आधारित करके शिक्षा को एक ऐसा नया रूप देकर भारतीय जनता के समाने रखा

जो बालक के स्वभावानुकूल हो तथा जो ब्रहमचर्य द्वारा तप, तेज तथा विद्युत की वृद्धि से बालकों के मन, शरीर, हृदय तथा आत्मा को सशक्त बना सके।

डा.आर.एस. मणि ने ठीक ही लिखा है – अरविन्द का शिक्षादर्शन मनुष्य की समस्त शक्तियों के उत्कर्ष तथा अधिक से अधिक पूर्ण विकास के सिद्धांत पर आधारित है। शिक्षा के क्षेत्र में उनके यह विचार सिद्ध करते हैं कि श्री अरविन्द हमारे देश के प्रमुख तथा प्रसिद्ध शिक्षा–शास्त्रियों में से थे।

संदर्भ :

1. ओड लक्ष्मीनारायण के : ''शिक्षा की दार्शनिक पृष्ठभूमि'' राजस्थान हिन्दी ग्रंन्थ अकादमी, जयपुर, सप्तम संस्करण, 2006।
2. अग्रवाल, जे. सी. ''उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षा और समाज'' अग्रवाल पब्लिकेशन, अस्पताल रोड, आगरा, द्वितीय संस्करण 2014–2015।
3. कोठारी, ममता एवं डा. रामशकल पाण्डेय : ''शिक्षा और समाज'' अग्रवाल पब्लिकेशन, अस्पताल रोड, आगरा, द्वितीय संस्करण 2014–2015।
4. पाण्डेय रामशकल : ''उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक'' अग्रवाल पब्लिकेशन, हॉस्पिटल रोड, आगरा।
5. पाण्डेय रामशकल एवं चतुर्वेदी डा.ममता : ''उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक'' अग्रवाल पब्लिकेान, हॉस्पिटल रोड, आगरा, सप्तम संस्करण 2014–2015।
6. सक्सैना, एन. आर. स्वरूप एवं चतुर्वेदी शिरवा : ''उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षा'' आर. लाल, बुक डिपो, निकट गवर्नमेन्ट इण्टर कॉलेज मेरठ, प्रथम संस्करण 2007।

हमारे लेखक

कल्पना कौशिक
प्रभारी निदेशक
भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ
17.बी इन्द्रप्रस्थ एस्टेट, नई दिल्ली

उषा भटनागर
लोकमान्य तिलक शिक्षा महाविद्यालय
उज्जैन (मध्य प्रदेश)

भावना ठकराल
एसोसिएट प्रोफेसर
चण्डीगढ़ विश्वविद्यालय
चण्डीगढ़

विभा तिवारी
तिवारी भवन, कन्या विद्यालय के पीछे
माधवगंज थाने के पास
लश्कर, ग्वालियर
मध्य प्रदेश – 474001

राजेश कुमार मौर्य
राम मंदिर चिंचाला, लालबाग
जिला– बुरहानपुर
मध्य प्रदेश